दावते इन्साफ़



अल्लामा अरशदुल क़ादरी

दावत इन्साफ

दावते इन्साफ़

तह़रीर

रईसुलक़लम अल्लामा अर्शदुल क़ादरी साहब

कुछ कम एक सदी से सारी दुनिया में देवबन्द और बरेली की मज़हबी आवेज़िश का जो शोर बरपा है और जिसके नाखुश-गवार असरात प्रेस से लेकर स्टेज तक पूरी तरह नुमायां है वह बिला वजह नहीं है। अगर इस हक़ीक़त की तलाश के लिए आपने अपने ज़हन का दरवाज़ा खुला रखा है तो इस मज़हबी निज़ाअ को वह हक़ीक़ी बुनियादें पढ़िए जिन्होंने उम्मत को दो मिल्लतों में तक़सीम कर दिया है।

हिन्दी कर्ता

मुहम्मद आरिफ़ आसवी क़ादरी

तक़दीम

हज़रत अल्लामा ग़ुलाम याहिया अन्जुम साहब

हम्दर्द यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

ईमान की ऐनक लगाकर क़ुरआन का मुताला कीजिए तो आप पर ये हक़ीक़त ज़ाहिर होगी कि मनसबे रिसालत का ऐहतराम व अदब और रसूल पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ वालिहाना वाबस्तगी ईमान व इस्लाम का संगे बुनियाद है। ये न हो तो कलमा व नमाज़ और इबादत व रियाज़त सब कुछ बेकार है, ये बात मैं सिर्फ़ हुस्ने ऐत्क़ाद की बुनियाद पर नहीं कह रहा हूं बल्कि क़ुरआन और हदीस की रोशनी में यही अम्र वाक़ेअ है।

क्योंकि मुनाफ़िक़ीन के नाम से क़ुरआन में हम एक क़ौम का हाल पढ़ते हैं, जो कलमा भी पढ़ती थी, मस्जिदे नबवी शरीफ़ में जमाअत के साथ नमाज़ भी अदा करती थी, तौहीद व रिसालत की गवाही भी देती थी, सहाबा के साथ जिहाद के सफ़र में भी निकलती थी लेकिन इन सारी बातों के बा-वजूद क़ुरआन इन्हें मोमिन नहीं मानता। बिल्कुल खुले लफ़्ज़ों में कहता है "वमा हुम बिमुअमिनीन" और वह मोमिन नहीं है।

मोमिन न मानने की वजह क़ुरआन ये बयान करता है कि ईमान के लिए सिर्फ़ ज़बान का इक़रार काफ़ी नहीं है बल्कि दिल से मानना भी ज़रूरी है। दिल अगर रसूल को रसूल नहीं मानता तो ज़बान का इक़रार बिल्कुल बे सूद है।

मुनाफ़िक़ीन के दिलों का हाल बयान करते हुए क़ुरआन इर्शाद फ़रमाता है कि

"फ़ी क़ुलूबिहिम म र ज़"

उनके दिलों मे बीमारी है। बीमारी से मुराद रसूल की जलन है। जलन ही का नतीजा है कि मुनाफ़िक़ीन जब रसूल की अज़मत व फ़ज़ीलत की बात सुनते हैं तो जलने लगते हैं। इस बात का मज़ीद वज़ाहत करते हुए क़ुरआन इर्शाद फ़रमाता है कि "फ़ज़ा-दहुमुल्लाहु

म-र-ज़ा"। अपने रसूल की सच्चाई और अज़मते शान का इज़हार फ़रमाकर अल्लाह उनकी बीमारी में और इज़ाफ़ा करता रहता है।

यानि ऐसी आयतें उतारता है जिन में रसूल के फ़ज़ाइल का बयान होता है। कुफ़्फ़ार पर ग़ल्बा व फ़तह की बशारतें होती है। ग़ैबी नुसरत व ताईद के ऐसे वाकिआत ज़ाहिर फ़रमाता है कि रिसालते मुहम्मदी की सच्चाई सूरज की तरह चमकने लगती है। जब भी इस तरह की कोई निशानी ज़ाहिर होती है तो मुनाफ़िक़ीन की जलन और बढ़ जाती है, इस तरह उनकी बीमारी में और इज़ाफ़ा होता रहता है।

इतनी बात तो मोटी अक्ल का आदमी भी जानता है कि दिल की जलन हमेशा बुग़्ज़ के नतीजे में पैदा होती है। जब तक किसी के दिल में किसी की तरफ़ से कोई बुग़्ज़ न हो उसकी खुशी देखकर जलने का सवाल ही पैदा नही होता। कुरआन फ़रमाता है कि कलमा और नमाज़ पढ़ने के बा-वजूद मुनाफ़िक़ीन को मोमिन न मानने की वजह ये है कि ईमान और बुग़्ज़ रसूल दोनों एक दिल में कभी जमा नही हो सकते। रसूल की अज़मते शान के इज़हार से जो जलता है इसका खुला हुआ मतलब ये है कि व रसूल की तरफ़ से अपने दिल में बुग़्ज़ रखता है।

कुरआन की ज़बान में मुनाफ़िक़ीन का जो हाल ऊपर बयान किया गया है उसे नज़र में रखिए और आज मुस्लिम आबादियों में अपने गर्दो व पेश का जायज़ा लीजिए तो कहीं न कहीं एक गिरोह आपको ऐसा ज़रूर मिलेगा जिसके अन्दर मुनाफ़िक़ीन की सारी बुराईयां मौजूद हैं। हुज़ूरे अकरम सय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अज़मते शान के इज़हार से मुनाफ़िक़ीन की तरह उन्हें भी तकलीफ़ होती है। इन्तिहा ये है कि मदीने के मुनाफिक़ीन की तकलीद में ये गिरोह हर वक्त तन्क़ीसे शाने रिसालत का जोया रहता है। कुरआन व हदीस का मुताला सिर्फ़ इस जज़्बे में करता है कि कहीं इस बात का सबूत मिल जाए कि हुज़ूर हमारी तरह बशर हैं। उन्हें फ़लां चीज़ का इल्म नहीं था, उन्हें फ़लां बात का इख़्तियार नही था, वह दुनिया व आख़िरत में हमारी कोई मदद नहीं कर सकते।

मदीने के मुनाफ़िक़ीन की तरह ये गिरोह भी हर उस काम से

जलता है जिसमें हुज़ूर पुर नूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अक़ीदत व मुहब्बत और तकरीम व ताअज़ीम का कोई पहलू निकलता है। जैसे मेहफ़िले मीलाद और क़याम व सलाम से इस गिरोह को इतनी सख़्त नफ़रत है कि बड़े बड़े गुनाहों से भी शायद इतनी नफ़रत नही होगी और इसका सबूत ये है कि भूल चूक या नफ़्स की शरारत से दूसरे गुनाहों का इरतिकाब तो वे कर लेते हैं लेकिन मीलाद और क़याम व सलाम में शिर्कत उनके नज़दीक ऐसा सख़्त गुनाह है जो कभी उनसे सादिर नहीं होता। हालांकि सब जानते हैं कि मेहफ़िले मीलाद में सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल का ज़िक्र होता है और क़याम में दुरूद व सलाम पढ़ा जाता है। इन्साफ़ से देखा जाए तो इन दोनों चीज़ों में गुनाह का शाइबा भी नही है फिर समझ में नही आता कि इतनी सख़्त नफ़रत की वजह क्या है ?

इस हदीस की रोशनी में जहां मीलाद व क़याम करने वाले खुश अक़ीदा मुसलमानों के मुतल्लिक़ ये बशारत हाथ आई कि वह हुज़ूर से मुहब्बत करने वाला गिरोह है वहीं मुनकिरीन के खिलाफ़ ये मफ़हूम भी उभर कर सामने आया कि जिस को किसी से नफ़रत हो जाती है वह उसके ज़िक्र से भी नफ़रत करने लगता है।

मदीने के मुनाफ़िक़ीन और आज के दौर के मुनकिरीन के मिज़ाज की हम-आहनगी को सामने रखिये तो ये हक़ीक़त खुल कर सामने आ जाती है कि अहले सुन्नत और देवबन्द का मौजूदा मसलकी इख़्तलाफ़ कुछ आजका नया हादसा नही है बल्कि इसका सिलसिला मदीने की तारीख से जुड़ा हुआ है। फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि अहले देवबन्द मुनाफ़िक़ीन के किरदार की नुमाइन्दगी करते हैं जब कि अहले सुन्नत को सहाबए किराम की जां-निसारी और मुहब्बते रसूल का हिस्सा मिला है। जज़्ब ए मुहब्बत ही का ये फल है कि हुज़ूर जाने रहमत व नूर की तारीफ़ व तौसीफ़ सुनकर हमारी बांछें खिल जाती हैं और हमारी रूहें खुशियों के सुरूर में डूबने लगती हैं। वालिहाना जज़्बे में जब हम या रसूलुल्लाह का नारा लगाते हैं तो ऐसा महसूस होता है कि हम यहां नही मदीने में हैं। लेकिन दूसरी तरफ़ दिल की

कजदगी के नतीजे में मुंह लटक जाता है, सीना जलने लगता है और ऐसी तकलीफ़ होती है जैसे किसी ने दिल में कांटे चुभो दिये हैं।

जिस किताबचे पर पेश लफ़्ज़ लिखने की सआदत हासिल कर रहा हूं उसका नाम "दावते इनसाफ" है। ये रईसुल क़लम हज़रत अल्लामा अर्शदुल क़ादरी बानी व मोहतमिम जामिआ हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया दिल्ली की तसनीफ़ लतीफ़ है। हज़रत अल्लामा की क़लमी ज़हानत और उनकी जादू अंगेज़ तर्ज़ तहरीर से अपने और बेगाने सभी वाक़िफ़ हैं। उलमाए अहले सुन्नत और उलमाए देवबन्द के मज़हबी निज़ाअ पर अल्लामा की ये किताब सन्जीदा और शाइस्ता पेरायए बयान का निहायत खूबसूरत मुरक़्क़ा है। इस मौज़ूअ पर हक़ की तलाश करने वालों के लिए इतनी फ़िक्र अंगेज़ और दिलरूबा तहरीर अब तक मेरी नज़र से नहीं गुज़री है।

मुझे यक़ीन है कि इस किताब के पढ़ने से ज़हन व फ़िक्र की बहुत सारी गांठें खुल जाएंगी और अन्धेरे में भटकने वालों को यक़ीन और तसकीन का उजाला हासिल होगा।

ये भी किताब की असर अंगेज़ी और कुबूले आम की बात कही जाएगी कि लाहौर के दो इल्मी और तब्लीग़ी इदारों, अन्जुमन गुलामाने मुस्तफ़ा और इदारए मआरिफ़े नोअमानिया ने हज़ारों की तादाद में छपवाकर उर्दू जानने वाले तब्क़े में दूर दूर तक मुफ़्त तक़सीम किया है और कर रहे हैं।

किताब के नाशिरीन का ये तआरूफ़ी कलमा पढ़ने के क़ाबिल है :-

"इल्मी व तहक़ीक़ी ज़ौक़ रखने वाले अपने और बेगाने हज़रात, मुबल्लिग़े इस्लाम रईसुल क़लम हज़रत अल्लामा अर्शदुल क़ादरी के मुहक़्क़िक़ाना और नाक़िदाना मिज़ाज से खूब अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं। हज़रत अल्लामा की बहुत सी तसानीफ़ व तहरीरात जैसे ज़लज़ला, तब्लीग़ी जमाअत, ज़ेर व ज़बर, ज़ुल्फ़ व ज़न्जीर, आईन-ए-हक़ीक़त, जमाअते इस्लामी, ताअज़ीराते क़लम, शरीअत, नक़्श खातम, अस्रे हाज़िर में मुनकिरीने रिसालत का गिरोह, मुहम्मद रसूलुल्लाह कुरआन में और दिल्ली से सहारनपुर तक का एक सफ़रनामा वग़ैरह अहले इल्म

की नज़र में तहकीक़ व तनक़ीह का ऊंचा मक़ाम हासिल कर चुकी हैं। ज़ेरे नज़र मक़ाला "दाअवत-ऐ- इन्साफ़" हज़रत अल्लामा का एक इन्तिहाई नाज़ुक व संगीन मसले पर अज़ीम इल्मी व तहक़ीक़ी कारनामा है। ये मक़ाला आम मुसन्निफ़ीन की तर्जे-तहरीर से हट कर लिखा गया है। इदारा अपने तमाम रफ़ीक़ों समेत इस अज़ीमुश्शान मक़ाले के क़लमबन्द करने पर हज़रत अल्लामा का तहे दिल से शुक्रगुज़ार है और अल्लाह करीम के हुज़ूर में इल्तजा करता है कि वह इस अज़ीम किताब के सिले में हज़रत मुसन्निफ़ को अजरे कसीर से नवाज़े। उनके इल्म व उम्र में बरकत अता फ़रमाए और इस किताब के ज़रीए मुसलमानाने आलम को हक़ व बातिल में तमीज़ पैदा करने की समझ अता करे। आमीन"

मुहम्मद उमर फ़ारूक़ मुस्तफ़सवी
लाहोर 22 ज़िल हिज, 1413 हि0

भोले भाले मुसलमानों को अस्रे हाज़िर के मुनाफ़िक़ीन से बा-ख़बर रखने के लिए ज़रूरत है कि इस किताब को ज़्यादा से ज़्यादा लोगों तक पहुंचाया जाए क्योंकि रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अज़मत व तकरीम के दुश्मन उस ज़हरीले सांप से भी ज़्यादा ख़तरनाक हैं जिससे रास्ता चलने वाले अन्जान मुसाफ़िरों को बाख़बर करना हम अपना अख़्लाक़ी और इन्सानी फ़र्ज़ समझते हैं।

अहले सुन्नत की तमाम छोटी बड़ी तन्ज़ीमों और इदारों से मैं पुर ज़ोर अपील करता हूं कि वह अपने हल्क़ों में इस किताब को मुफ़्त तक़सीम करें। अपनों को भी दें और बेगानों को भी पहुंचाएं। हो सकता है उन्हें भी हिदायत नसीब हो। क्योंकि किरदार अमल की हज़ार ख़राबियों के बावजूद अपने महबूब आक़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मुसलमानों का वालिहाना मुहब्बत और उनकी अज़मत व नामूस पर कट मरने का जज़्बा आज भी उनके अन्दर इतनी वारफ़्तगी के साथ मौजूद है कि हम इसका अन्दाज़ा नहीं लगा सकते। बेख़बरी में वह भले ही ग़लत-फ़हमी का शिकार हो जाए लेकिन ये

जान लेने के बाद कि फ़लां गिरोह गुस्ताख़े रसूल है, वह उसे हरगिज़ बर्दाश्त नही करेंगे।

अहक़र

गुलाम याहिया अन्जुम

15 दिसम्बर, 1993 ई0, दिल्ली

रोज़नामा "नवाए वक़्त" लाहौर का तबसरा
(तारीख़ 10 दिसम्बर, 1993 ई0)

"हज़रत अल्लामा अर्शदुल क़ादरी साहिब की शख़्सियत दीनी व इल्मी हल्क़ों में किसी तआरुफ़ की मोहताज नहीं है। वह हिन्दुस्तान के नामवर आलमे दीन और बुलन्द पाया मुसन्निफ़ हैं और अब तक उनकी बहुत सी किताबें छपकर अवाम व ख़्वास से ख़िराजे तहसीन वसूल कर चुकी हैं।

ज़ेरे नज़र किताब "दाअवतें इन्साफ़" उनकी ताज़ा तरीन इल्मी काविश है जिसमें उन्होंने एक इन्तिहाई नाज़ुक मोज़ूअ पर क़लम उठाया है और तहक़ीक़ का हक़ अदा कर दिया है। उनका अन्दाज़ तहरीर बड़ा आम फ़हम और असर अंगेज़ है।

हक़ीक़त में ये अपने मोज़ूअ पर एक ऊंचे दर्जे की किताब है। छोटी होने के बावजूद इसमें हैरत अंगेज़ जामिअत है।

हज़रत अल्लामा साहिब ने जिस जज़्बे के तहत अपनी गुज़ारिशात पेश की हैं अगर दीनी जमाअतों के रहनुमा उन उसूलों को अपनालें तो आज उम्मतें मुस्लिमा को इत्तिहाद की ख़ुशनसीब हो सकती है।"

हमारी इस किताब की इशाअत उन करम फ़रमाओं के लिए है

जो हौसला व हिम्मत और ख़ुलूस के जज़्बे के साथ उलमा अहले सुन्नत व उलमा देवबन्द के माबैन इख़्तिलाफ़ात को जानना चाहते हैं और इत्तिफ़ाक़ व इत्तिहाद की असल रूकावटों को दूर करने का अज़्म उठाते हैं।

जो अपनी निजी मजलिसों और प्राइवेट मीटिंगों में इस सन्जीदा और उसूली इख़्तिलाफ़ात को मौलवियों के चक्कर, पेट के धन्धे, खाने पीने के हीले, शिकम परस्ती और इस क़िस्म के मिले जुले अलक़ाबात से याद करके दादे तहसीन वसूल करके ख़ुशी से फूले नहीं

समाते।

जो आला तालीम याफ़्ता होने के बावजूद इख़्तिलाफ़ात को समझने और दूर करने के लिए किसी क़िस्म फ़िक्र व मफ़ाहमती कोशिश करने को वक़्त बर्बाद करना समझते हैं।

जो उलमा अहले सुन्नत व उलमा देवबन्द के इख़्तिलाफ़ात को महज़ जुज़वी या फ़रूई या लफ़्ज़ी ख़याल करते हैं।

जो रात दिन अपनी तमाम तर इल्मी व तहक़ीक़ी सलाहियतें गुस्ताख़ाना व कुफ़्रिया अल्फ़ाज़ व इबारात की तौज़ीह व तशरीह व तावील करने में ख़र्च कर रहे हैं जैसे इन वज़ाहतों के रह जाने से दीन शायद अधूरा रह जाए।

जो उलमा अहले सुन्नत व उलमा देवबन्द के इख़्तिलाफ़ (राहे इत्तिफ़ाक़ व इत्तिहाद की सबसे बड़ी रुकावट) को ज़ेरे तहक़ीक़ लाने को तज़ीअे औक़ात समझते हैं और इत्तिहाद व इत्तिफ़ाक़ के दाओ भी हैं।

जो तीजा, साता, चालीसवाँ, मज़ारात मुक़द्दसा की हाज़िरी को उलमा अहले सुन्नत व उलमा देवबन्द के माबैन इख़्तिलाफ़ की असल वजह समझते हैं।

जो गुस्ताख़ी व बे-अदबी और एहानत व तहक़ीर वाली इबारात पर मुशतमिल किताबें और लिटरेचर छापकर तक़सीम करने और बेचने को दीन की बहुत बड़ी ख़िदमत समझ बैठे हैं।

जो मज़हबी इख़्तलाफ़ का नाम सुनकर तिलमिला उठते हैं लेकिन अपने दफ़्तरी कारोबारी मसाइल व मामलात में इख़्तलाफ़ को बर्दाश्त करने और उन्हें ख़ुश असलूबी से हल करने में अपने तमाम तर जानी व माली मसाइल को ख़र्च कर देते हैं।-जो ये मश्विरा देते हैं कि अब हालात इस क़िस्म के हैं कि मुतनाज़ा इबारात व मसाइल पर बहस व तमहीस नहीं करनी चाहिए लेकिन अपना ये मुफ़ीद मश्विरा उन इदारों को नहीं पहुंचाते जो रात दिन इस क़िस्म का मुतनाज़ओ और इख़्तलाफ़ी लिटरेचर छापते रहते हैं।

जो मसला ताअज़ीमे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, मसला

मक़ाम व मरतबा रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, मसला ख़साइसे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, मसला अज़मते सहाबा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, व अहले बैत, मसला विलायत और बहुत सी मुस्लिमा मसाइल इस्लाम व अहले सुन्नत को फ़िरक़ा वारियत का नाम देकर दानिस्ता व ग़ैर-दानिस्ता कुफ़्र की हिमायत कर रहे हैं।

जो इख़्तलाफ़ की असल वजह समझते हुए मुल्क गीर सतह पर कोई ऐसा अमल पेश करने का सच्चा जज़्बा रखते हों जिससे इख़्तलाफ़ की ख़लीज को कम से कम करने और इत्तिफ़ाक़ व इत्तिहाद की तरफ़ पेशरफ़्त की जा सके। आमीन

मुहम्मद उमर फ़ारूक़ मुस्तफ़वी
लाहौर 23 ज़िल हिज 1413 हि0

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"नह-मदुहु व नुसल्लि अला रसूलिहिस-सॉदिकिल-अमीनिल करीम 0"

उलमाऐ देवबन्द के लिए पहले से अगर कोई नर्म गोशा आपके दिल में मौजूद है तो इस किताब के पढ़ने का आप पर कुदरती रद्दे अमल ये होगा कि आप गुस्से की झुंझलाहट में इसे बन्द करके कही एक तरफ़ रख देंगे। लेकिन अगर आप के दिल में वाक़िआत की तह में उतरकर सच्चाई की तलाश करने का जज़्बा मौजूद है तो आप ये जानने की कोशिश करेंगे कि उलमा देवबन्द के ख़िलाफ़ एक मुल्क-गीर जंग की बुनियाद आख़िर क्यों कर पड़ी। बहस की वह क्या वजह थी कि जिनके ज़ेरे असर कई साल तक पूरे मुल्क में ये मअरके गरम रहे।

ये निज़ाअ दो चार आदमियों तक महदूद होता तो उसे शख़्सी या ख़ान्दानी मफ़ादात कहकर नज़र अन्दाज़ किया जा सकता था। लेकिन उलमाऐ देवबन्द के ख़िलाफ़ मज़हबी पेकार का दायरा इतना बढ़ गया है कि मुल्क ही नहीं ग़ैर मुल्कों का भी बहुत बड़ा हिस्सा इसकी लपेट में है। मस्जिदों से लेकर मदरसों तक मज़हबी जिन्दगी के सारे शोअबे इस इख़्तलाफ़ से इस दर्जा मुतास्सिर हैं कि देहात से आफ़ाक़ तक पूरी कौम दो मिल्लतों में तक़्सीम हो गई है। इसलिए इस इख़्तलाफ़ को देवबन्द और बरेली का शख़्सी झगड़ा क़रार देकर इसकी हक़ीक़ी मुहर्रिकात से आंखें बन्द नहीं की जा सकती।

निहायत अफ़सोस के साथ मुझे हिन्द व पाक के मुस्लिम मुअर्रिख़ीन से ये शिकवा है कि आज तक ये तौफ़ीक़ नही हुई कि वह ग़ैर जानिबदारी के साथ उलमा देवबन्द के ख़िलाफ़ उन मज़हबी बे-चैनियों की सही बुनियाद मालूम करते जो मुल्क व ग़ैर मुल्क के करोड़ों मुसलमानों के बीच आधी सदी से फैली हुई हैं और जिसके नतीजे में मुस्लिम मुआशिरा एक न ख़त्म होने वाले रूहानी कर्ब और ज़हनी व फ़िक्री इन्तिशार का शिकार है। हमारी मज़लूमी के साथ इससे बढ़कर दर्दनाक मज़ाक़ और क्या हो सकता है कि बे-ख़बरों की

हालत में हमारे ऐहतजाज को फ़ितना अंग्रेज़ी से ताअबीर किया जाता है हालांकि अपने ग़म व गुस्सा और अपने जज़्बे की बेताबियों का इज़हार हर मज़लूम का वाजिबी हक़ है।

इतनी तम्हीद के बाद अब हम इस मज़हबी निज़ाअ की पूरी तफ़सील इस उम्मीद के साथ अहले इल्म के सामने पेश कर रहे हैं कि वह इस रोशनी में निज़ाअ की असल मुहर्रिकात का पता चलाऐंगे बिल फ़र्ज़। निगाहों पर बोझ हो जब भी सब्र के साथ पढ़िए कि हक़ीकत का मुतलाशी किसी गिरोह का - तरफ़दार नही होता।

उलमाऐ देवबन्द के साथ उलमाए अहले सुन्नत के इख़्तिलाफ़ात की तीन मज़बूत बुनियादें

कुछ कम एक सदी से सारी दुनिया में देवबन्द और बरेली की मज़हबी आवेज़िश का जो शोर बरपा है और जिसके ना खुशगवार असरात प्रेस से लेकर स्टेज तक पूरी तरह नुमायां है वह बिला वजह नही है, अगर इस हक़ीकत की तलाशी के लिए आपने अपने ज़हन का दरवाज़ा खुला रखा है तो नीचे इस मज़हबी निज़ाअ(झगड़ा) की वो हक़ीक़ी बुनियादें पढ़िए जिन्होंने उम्मत को दो मिल्लतों में तक़सीम कर दिया है।

पहली बुनियाद

अपनी मज़हबी सरिश्त के एतबार से मुसलमान का जो वालिहाना ताल्लुक अपने रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मोहतरम ज़ात से है वह किसी से छुपा हुआ नही है। उसका ईमान अपने रसूल की बारगाह में इतना अदबी और हस्सास है कि रसूल की हुरमत पर ज़रा सी ख़राश भी उसे बर्दाश्त नहीं। नामूसे रसूल की हिफ़ाजत के लिए हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने वालिहाना जज़्बे के साथ अपनी फ़िदाकारियों का मुज़ाहिरा किया है, वह तारीख़ का जाना पहचाना वाक़िआ है। रसूल की मुहब्बत का ये रूख़ भी याद रखने

के काबिल है कि किसी गुस्ताख के खिलाफ़ ग़म व गुस्सा और नफ़रत व ग़ज़ब के इज़हार के सवाल पर कभी ये नहीं देखा गया कि निशाने पर कौन है। बाहर का हो या अन्दर का, जिसने भी रसूल की शान में गुस्ताख़ी का इज़हार किया मुसलमानों की ग़ैरते ईमानी की तलवार उसके ख़िलाफ़ बे-नियाम हो गई।

आज मलऊन रूश्दी की ज़िन्दा मिसाल आपके सामने है। रसूल की इज़्ज़त पर हमला करके उसने सारे आलमे इस्लाम को अपना दुश्मन बना लिया है। वह शहीद फ़ख़्र के क़ाबिल हैं जो रूश्दी के खिलाफ़ अपनी ग़ैरते ईमानी का मुज़ाहिरा करते हुए अपने आक़ा की इज़्ज़त पर कुर्बान हो गए।

उलमाए देवबन्द के ख़िलाफ़ भी हमारे ग़म व गुस्से की सबसे बड़ी बुनियाद यही है कि उनके बड़ों ने अपनी कुछ किताबों में रसूले मोहतरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शाने अक़दस में सख़्त गुस्ताख़ाना कल्मात इस्तेमाल किये हैं, जिसकी मुख़्तसर तफ़सील यह है :

1. उलमाए देवबन्द के मज़हबी पेशवा मौलाना अशरफ़ अली थानवी ने अपनी किताब हिफ़्ज़ुल ईमान में हुज़ूर अकरम सय्यद आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इल्मे पाक को रज़ाइल और हैवानात व बहाइम के इल्म से तश्बीह दी है, जिसके वह खुद भी इक़रारी मुज्रिम हैं।

अहले इल्म व अदब ज़बान के इस मुहावरे से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं कि मोहतरम चीज़ों के साथ किसी चीज़ की तश्बीह से अज़मत व तकरीम के मानि पैदा हो जाते हैं और जब रज़ाइल के साथ किसी चीज़ की तश्बीह दी जाती है तो उससे तौहीन व तनक़ीस के मानि निकलते हैं। उर्दू ज़बान के मुहावरात में तश्बीह व तमसील का ये ज़ाब्ता इतना शायअ और ज़ायअ है कि कोई साहिबे इल्म इसके उन मानि व मतालिब के इस्तलज़ाम से इन्कार नहीं कर सकता।

इस बुनियाद पर हमारा ये दावा शक व शुबा से बालातर है कि मौलाना थानवी बारगाहे रिसालत के गुस्ताख़ हैं। उन्होंने रसूले पाक के इल्म शरीफ़ को रज़ाइल के इल्म से तश्बीह देकर एहानते रसूल के ख़ौफ़नाक जुर्म का इर्तकाब किया है।

2. उलमाए देवबन्द के दूसरे और तीसरे मज़हबी पेशवा मौलाना ख़लील अहमद अम्बेठवी और मौलाना रशीद अहमद गंगोही ने ब्राहीन क़ातिआ नामी किताब में लिखा है कि ज़मीन के इल्मे मुहीत के सवाल पर शैतान का इल्म रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इल्म से ज़्यादा है। शैतान के मुक़ाबले में जो शख़्स रसूल की वुसअत इल्म का अक़ीदा रखता है, वह मुश्रिक है क्योंकि शैतान के इल्म की वुसअत पर क़ुरआन व हदीस नातिक़ हैं। रसूल के इल्म की वुसअत पर न क़ुरआन में कोई दलील है और न हदीस में।

इसमें क़तई दो राए नहीं कि शैतान के मुक़ाबले में रसूले पाक के इल्म की तनक़ीस एक खुला हुआ कुफ़्र है और एक खुली हुई गुस्ताख़ी है।

इस तरह ये कहना भी खुली हुई गुस्ताख़ी और खुला हुआ कुफ़्र है कि शैतान के मुक़ाबले जो शख़्स रसूले पाक की वुसअते इल्म का अक़ीदा रखता है, वह मुश्रिक है लेकिन यही अक़ीदा शैतान के इल्म के बारे में रखना शिर्क नहीं।

इस तरह ये कहना भी रसूले पाक की सरीह तनक़ीस है कि रसूले पाक के इल्म की वुसअत पर क़ुरआन व हदीस में कोई दलील नहीं है लेकिन शैतान के इल्म की वुसअत पर क़ुरआन में भी दलील है और हदीस में भी।

3. उलमाए देवबन्द के सब से बड़े मज़हबी पेशवा मौलाना क़ासिम नानोतवी बानी-ए-दारुल उलूम देवबन्द ने अपनी किताब "तहज़ीरुन्नास" में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को आख़िरी नबी मानने से इन्कार किया है जबकि हुज़ूर को ख़ातमुन नबिय्यीन होने की हैसियत से आख़िरी नबी मानना क़ुरआन से भी साबित है और हदीस से भी।

बल्कि अपनी किताब में उन्होंने यहां तक लिख दिया है कि हुज़ूर के ज़माने में या हुज़ूर के बाद भी अगर किसी नए नबी का आना फ़र्ज़ किया जाए जब भी हुज़ूर की ख़ातमियत में कोई फ़र्क़ नहीं आएगा। हालांकि ये बात आसानी से हर शख़्स समझ सकता है कि

किसी नए नबी के आने की सूरत में हुजूर के आख़िरी नबी होने का अक़ीदा बातिल हो जाता है। मौलाना नानोतवी की यही वह किताब है जिसे क़ादियानी हज़रात मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी की नबुव्वत के जवाज़ का पेश खेमा क़रार देते हैं।

याद रहे कि ख़त्मे नबुव्वत के मसले में उलमाए देवबन्द के साथ हमारा इख़्तिलाफ़ फ़रोई नही बल्कि उसूली और बुनियादी है और ये इख़्तिलाफ़ हुरमत व हिल्लत का नही बल्कि कुफ़्र व इस्लाम का है।

दावते इन्साफ़

देवबन्दी उलमाअ के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ की ये पहली बुनियाद है जो उनकी किताबों के हवालों के साथ आपके सामने है। वाज़ह रहे कि इस बुनियाद का ताल्लुक़ एहानते रसूल और इन्कारे ज़रूरयाते दीन से है। जिसके कुफ़्र होने में ज़रा भी कोई शुबा नही है। कुरआन की बेशुमार आयतें इस अक़ीदे पर इन्साफ़ की गवाह हैं कि रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में हल्की सी गुस्ताख़ी भी इस्लाम और ईमान के रिश्ते को तोड़ देती है। इल्म और इबादत की कोई फ़ज़ीलत गुस्ताख़ी के बुरे अन्जाम से किसी को हरगिज़ नही बचा सकती।

इस मौके पर अपने क़ारईन से ये ज़रूर कहूंगा कि अकाबिर देवबन्द की इन एहानत आमेज़ तहरीरों को आप इस ज़ावि-ए-नज़र से हरगितज़ मत पढ़िये कि ये देवबन्द और बरेली की एक मज़हबी निज़ाअ है बल्कि पढ़ते वक़्त अपनी फ़िक्र को इस नुक़्ते पर मरकूज़ रखिए कि अकाबिर देवबन्द की इन इबारतों की ज़र्ब सीधी रसूले अकदस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अज़मत और हुरमत पर पड़ती है। इन गुस्ताख़ क़लम का हमला उलमाए बरेली पर नही बल्कि ख़ास रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ाते मोहतरम पर है।

अगर खुदा न करे आपने इन तहरीरों को इस नुक़्ताए नज़र से पढ़ा कि ये देवबन्द और बरेली के नाम से दो मकतब फ़िक्र के

उलमाअ का बाहमी झगड़ा है तो जज़्बे का वालिहाना तक़द्दुस बाक़ी नहीं रहेगा जो अपने रसूल की हिमायत में किसी के ख़िलाफ़ दो टोक फ़ैसला करने के लिए मतलूब है।

मेरी गुज़ारिश का मुद्दआ सिर्फ़ ये है कि अपनी किसी महबूब शख़्सियत के मुक़ाबले में "रसूल" को तरजीह देने का सवाल ख़ुद आपके अपने ईमान का तक़ाज़ा होना चाहिएं। इसलिए उलमाए बरेली को आप एक तरफ़ रखिये और ख़ुद अपने मोमिन ज़मीर से पूछिये कि अकाबिर देवबन्द की इन तहरीरों से रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हुरमत मजरूह होती है या नहीं ? और दीन के उसूल व ज़रूरयात से इन्हराफ़ का पहलू ज़ाहिर होता है या नहीं ? उनकी ये तहरीरें किसी अजनबी ज़बान में नहीं हैं कि आप को किसी तर्जुमा करने वाले की ज़रूरत पेश आए। वह सीधी सादी उर्दू ज़बान में हैं जिन्हें आप भी समझना चाहें तो समझ सकते हैं। हमारी तरफ़ से हवालों की निशान-दही पर आपको भरोसा न हो तो असल किताब मंगवाकर देख लें वह आम भी कुतुबख़ानों से दस्तयाब हो जाती हैं।

अब रह गया उलमाए बरेली का सवाल तो इस सिलसिले में उनका किरदार इससे ज़्यादा और कुछ नहीं है कि अकाबिर देवबन्द की इन एहानत आमेज़ इबारतों को पढ़ने के बाद जो उन्हें नाक़ाबिले बर्दाश्त तकलीफ़ पहुंची और जिस रूहानी कुर्ब के इज़तराब में वह अचानक मुब्तिला हो गए उसके रद्दे अमल का इज़हार उन्हों ने बरमला किया। ताल्लुक़ात की कोई मस्लिहत इस राह में उन्हें हायल नहीं हुई।

उसके बाद उन्होंने देवबन्द के उन अकाबिरीन से सीधे राब्ता क़ायम किया और दलाइल की रोशनी में उन से मुतालबा किया कि वह अपनी इन कुफ़्री इबारतों से जो तनक़ीसे शाने रिसालत और इन्कारे ज़रूरयाते दीन पर मुशतमिल हैं तौबा का एलान करें और अपनी किताबों से इन दिल आज़ार इबारतों को निकाल दें लेकिन उनकी झूटी इज़्ज़त व शोहरत राह में हाइल हो गई।

गुस्ताख़ाने रसूल के बीच एक क़दरे मुशतरक

सिलसिल-ए-कलाम से हट कर एक बात अपने क़ारअीन किराम के ज़हन नशीन कराना चाहता हूं। उम्मीद है कि इन्तज़ार का ये लम्हा आपको बारे खातिर न होगा। रसूले अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शाने मोहतरम में गुस्ताख़ी करने वालों की तारीख़ का जब आप मुताला करेंगे तो हर गुस्ताख़ की ये सरिश्त क़दरे मुशतरक के तौर पर आपको हर जगह नज़र आएगी कि दिल के जज़्बाए निफ़ाक़ के ज़ेरे असर जब नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी का कोई कलमा उनकी ज़बान व क़लम से निकल जाता है तो एक शर्मसार मुज्रिम की तरह वह अपने कलमए कुफ़्र से तौबा करने के बजाए अपने आपको बेगुनाह साबित करने के लिए ग़लत सलत तावील और मुरुव्वत परवरी के जज़्बे का मुज़ाहिरा करने लगते हैं।

रिसालत के ज़माने में भी मदीने के मुनाफ़िक़ीन का यही रवैया था चुनांचे एक सफ़र से वापसी के मौके पर जब मुनाफ़िक़ीन ने हुज़ूर नबी पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी का कोई कलमा इस्तेमाल किया। जब सहाबा किराम के ज़रिये हुज़ूर तक ये बात पहुंची और हुज़ूर ने मुनाफ़िक़ीन से इसके मुताल्लिक़ बातचीत की तो उन्होंने ऐतराफ़े जुर्म और तौबा व माफ़ी के बजाए बात बनाने, तावील करने और बहाने तराशने का रवैया इख़्तियार किया चूंकि उस वक़्त नुज़ूले वही का सिलसिला जारी था इसलिए फ़ौरन उनके ख़िलाफ़ ये आयत नाज़िल हुई " ला तअ-तज़िरू क़द कफ़रतुम बअदा ईमानिकुम" हीले बहाने मत बनाओ, तुम ईमान लाने के बाद काफ़िर हो चुके। अगर नुज़ूले वही का सिलसिला जारी न रहता तो उनके झूठ का पर्दा फ़ाश न होता और कलमा पढ़कर मुस्लिम मुआशरे में अपने कुफ़्र को छुपाए रखते।

सुख़न परवरी की ताज़ा मिसाल

मुनाफ़िक़ीने मदीने का ये किरदार आजके दौर में आप देखना चाहते हों तो जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली के पुरो वाइस चांसलर का क़ज़िया पढ़िये। उन्होंने किसी इंग्लिश मैगज़ीन को इन्टरव्यू देते हुए सैक्यूलर कहलाने के शौक़ में आजके मलऊन रुश्दी की किताब के बारे में अपने इस ख़्याल का इज़्हार किया कि हुकूमते हिन्द ने इस किताब पर पाबन्दी आयद की है उसे उठा लेना चाहिये क्योंकि हर शख़्स को अपनी राए के इज़्हार का बुनियादी तौर पर हक़ हासिल है।

इस बात का खुला हुआ मतलब ये है कि रुश्दी ने अपनी मलऊन किताब में जो रसूल की एहानत की है उस पर उससे कोई मुआख़िज़ा नहीं किया जा सकता क्योंकि उसे अपनी राए के इज़्हार का बुनियादी तौर पर हक़ हासिल है। दूसरे लफ़्ज़ों में अपनी इस बात के ज़रिए मुशीरुल हसन ने एहानते रसूल की खुली हुई हिमायत की है। जामिया मिल्लिया इस्लामिया के ग़य्यूर और सरफ़रोश स्टूडेन्ट्स क़ाबिले तहसीन व तकरीम हैं कि जब उन्होंने इन्टरव्यू पढ़ा तो एक गुस्ताख़े रसूल की हिमायत की बुनियाद पर वह तहफ़्फ़ुज़े नामूसे रिसालत के जज़्बे में मुशीरुल हसन के ख़िलाफ़ पूरी तरह सफ़ आरा हो गए और उन्होंने हुकूमत से मुतालिबा किया कि चूंकि गुस्ताख़ का हामी गुस्ताख़ ही होता है इसलिए मुशीरुल हसन को उसके ओहदे से हटाया जाए। हम ऐसे दिल आज़ार शख़्स को किसी क़ीमत पर बर्दाश्त नहीं करेंगे।

चूंकि ये मसला नामूसे रसूल का था इसलिए जामिया मिल्लिया के टीचर्ज़ ने भी बड़ी तादाद में हर तरह के नतीजे से बे परवाह हो कर स्टूडेन्ट्स के साथ मिलकर उनकी हिमायत का ऐलान कर दिया। दिल्ली के मुसलमानों तक जब ये बात पहुंची तो हर तरफ़ मुशीरुल हसन के ख़िलाफ़ नफ़रत व बेज़ारी की लहर दौड़ गई और स्टूडेन्ट्स के मुतालबे में शहर के अवाम भी शरीक हो गए। ज़ाकिर नगर की अन्जुमन रज़ा ने जिस जज़्बाए सरफ़रोशी के साथ मुशीरुल हसन के

खिलाफ अपने ग़म व गुस्से का इज़हार किया और जामिया के स्टूडेन्ट्स की हौसला अफ़्ज़ाई की और उन्हे सही मश्वरे दिये वह आवे ज़र से लिखने के क़ाबिल हैं।

लेकिन दारूल उलूम देवबन्द के उलमाअ?

सिर्फ़ दारूल उलूम देवबन्द के उलमाअ जिनमें मौलवी सालिम साहिब इब्ने क़ारी तैय्यब साहिब और मौलवी अहमद अली क़ासमी और क़दीम दारूल उलूम देवबन्द के वर्किंग जनरल सैक्रटरी मौलवी फुज़ैल अहमद साहिब के नाम खास तौर पर क़ाबिले ज़िक्र हैं। इन तमाम हज़रात के नज़दीक मुशीरूल हसन की गुस्ताखी साबित नहीं है। जैसा कि रोज़नामा "क़ौमी आवाज़, दिल्ली" की तारीख़ 18, मई 1992 की इशाअत में उनके मुश्तरका बयान के अल्फ़ाज़ ये हैं :-

"स्टूडेन्ट्स को इस्लामी तालीमात की रोशनी में ये देखना चाहिये कि जिसको शातिमे रसूल (गुस्ताखे रसूल) कहा जा रहा है वह हक़ीक़त में शातिमे रसूल है या नहीं।"

किस क़दर अफ़सोस की बात है कि जामिया मिल्लिया के स्टूडेन्ट्स जो आलिमे दीन नहीं हैं जामिया मल्लिया आलिमे दीन नही हैं और दिल्ली के मुसलमानों को मुशीरुल हसन की गुस्ताखी समझ में आ गई लेकिन दारूल उलूम देवबन्द के उलमाअ इस गुस्ताखी को समझने में क़ासिर रहे।

हालांकि क़ौमी आवाज़ की इसी इशाअत में अख़्बार के आखिरी सफ़्हे पर मुशीरुल हसन की बाबत शेखुल जामिया बशीरूद्दीन अहमद साहिब की एक अपील छपी हुई है जिसका ये हिस्सा मुशीरुल हसन के जुर्म पर भरपूर रोशनी डालता है :-

"जामिया के क़दीम वाइस चांसलर प्रोफेसर मुशीरुल हसन ने उस किताब (रुश्दी की किताब) पर आइद पाबन्दी उठाने से मुताल्लिक़ जो इज़हारे ख़्याल किया है वह चूंकि बाइसे तकलीफ़ है और उसकी वजह से नाराज़गी और ऐहतजाज की एक फ़िज़ा पैदा गई है।"

वाइस चांसलर की इस तहरीर से ये बात बिल्कुल वाज़ह हो

जाती है कि मुशीरूल हसन के खिलाफ़ स्टूडेन्ट्स का इलज़ाम बे-बुनियाद नही है क्योंकि पाबन्दी उठाने की बात उन्होंने इसी बुनियाद पर की है कि हर शख़्स को बुनियादी तौर पर इज़हारे ख़्याल की आज़ादी हासिल है। इसलिए सलमान रूश्दी ने पैग़म्बरे इस्लाम के खिलाफ़ जो कुछ लिखा है अपने हक़ का जायज़ इस्तेमाल किया है लेकिन सख़्त अफ़सोस है कि इतनी वज़ाहत के बावजूद दारूल उलूम देवबन्द के ये उलमाअ मुशीरूल हसन को बे गुनाह समझ रहे हैं। उनके पास उनकी बेगुनाही की जो सब से बडी दलील है, वो यह है, पढ़िये और खून का घूंट पीजिए :-

"उस शख़्स को शातिमे रसूल (गुस्ताखे रसूल) कहा जा रहा है। जो वज़ाहत के साथ कह रहा है कि वह इस गुनाह से बरी है और हुजूर का मुकम्मल ऐहतराम अपने दिल में रखता है।"

दारूल उलूम देवबन्द के उन उलमाअ की कज फ़हमी पर सर पीट लेने को जी चाहता है कि उन्हें ये भी पता नहीं कि किसी दावे के सबूत के लिए मुजरिम का इक़रार ज़रूरी नहीं है। इसका बयान और बयान के अल्फ़ाज़ दावे के सबूत के लिए बहुत काफ़ी हैं वर्ना बताया जाए कि इस्लामी ताअज़ीरात की तारीख़ में किस गुस्ताख को इक़रारे जुर्म की बुनियाद पर सज़ा दी गई है। तारीख़ में जिसे भी सज़ा मिली है, उसके अल्फ़ाज़ और बयान को ही बुनियाद बनाया गया है। क्या दारूल उलूम देवबन्द का दारुल इफ़्ताअ ये साबित कर सकता है कि कलमए कुफ़्र की बुनियाद पर जिसकी भी उसने तकफ़ीर की है उससे कुफ़्र का इक़रार करवाया है लेकिन मुशीरूल हसन के बारे में सिवा इसके और क्या कहा जा सकता है कि जज़्बए हुब्बे रसूल पर मुशीरूल हसन की हिमायत का जज़्बा अगर ग़ालिब न आ गया होता तो दारूल उलूम देवबन्द के ये उलमाअ ऐसी कच्ची बात हरगिज़ नही कहते। किस मस्लिहत ने उन्हें मुशीरूल हसन के हक़ में सफ़ाई का वकील बना दिया है उसे वही बता सकते हैं।

हमने तो ये क़िस्सा सिर्फ़ इसी लिए छेड़ा है ताकि हमारे क़ारईन इस बात को समझ सकें कि जज़्बए हुब्बे रसूल किसी

गुस्ताख़ के ख़िलाफ़ किस तरह अहले ईमान को मुत्तहिद करता है और जिन लोगों का सीना इस मुक़द्दस जज़्बे से खाली हैं वह गुस्ताख़ की हिमायत के लिए कितनी बे-हयाई के साथ मुज़हका खेज़ तावीलों का सहारा लेते हैं।

गुस्ताखाने रसूल की सरिश्त और उनके हामियों का ज़हन व किरदार सम्झाने के लिए मैं अपने उठाए हुए सिलसिलए कलाम से बहुत दूर निकल आया, अब फिर आगे के सफ़्हात में आप अकाबिरे देवबन्द के खिलाफ़ एहानते रसूल के इलज़ामात की बहस से अपने ज़हन का रिश्ता जोड़ लें।

ठीक उसी तरह इस वक़्त भी देवबन्द के उलमाअ ने अपने अकाबिर की गुस्ताखियों पर पर्दा डालने के लिए मुआनिद का रवय्या इखतयार कर लिया है और सुखन परवरी के जज़्बे से मुसल्लह हो कर वह मैदान में उतर आए और पूरी ताक़त के साथ अवाम में इस बात की तश्हीर करने लगे कि एहानत रसूल के इलज़ाम से हमारा दामन पाक है। ये सारा झगड़ा उलमाए बरेली का खड़ा किया हुआ है। उन्होंने हमारे अकाबिर के खिलाफ़ एहानते रसूल का जो इलज़ाम आइद किया है वह बिल्कुल झूठा और बे-बुनियाद है।

उनके पास ज़राये अबलाग़ और माली वसाइल की कमी नहीं थी। जब उनके झूठे परोपेगेन्डे से अवाम मुतास्सिर होने लगे तो इनका झूठ फ़ाश करने के लिए मजबूरन हमें बहस व मुनाज़रे का रास्ता इख़्तियार करना पड़ा ताकि अवाम की अदालत में बिल्कुल आमने सामने ये हक़ीक़त खुल जाए कि इन अकाबिर के खिलाफ़ एहानते रसूल का इलज़ाम झूठा नहीं बल्कि सच है।

चुनांचे हर मुनाज़रे की मजलिस में इन्ही के मुनाज़िरे उलमाअ के सामने इनकी किताबों से वह एहानत आमेज़ इबारतें सफ़्हा और सतर की निशान-दही के साथ पढ़ पढ़ कर सुनाई जाती रही और इनके उलमाअ ने कभी ये नहीं कहा कि ये किताबें हमारे अकाबिर की तसनीफ़करदा नहीं हैं और ये इबारतें इन किताबों में मौजूद नहीं हैं।

बहस व मुनाज़रे से बड़ा फ़ायदा ये हुआ कि मुल्क की अवाम की समझ में ये बात अच्छी तरह उतर गई कि अकाबिरे देवबन्द के

खिलाफ़ एहानते रसूल का इलज़ाम बे-बुनियाद नहीं है और ये भी लोगों ने वाज़ेह तौर पर महसूस कर लिया कि उलमाऐ अहले सुन्नत का ये सारा इज़्तराब और तहरीर व तक़रीर के ज़रिये उनकी बेचैनियों का ये सारा मुज़ाहिरा सिर्फ़ तहफ़्फ़ुज़े नामूसे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जज़्बे में है।

उलमाऐ देवबन्द के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ की दूसरी बुनियाद

उलमाऐ देवबन्द के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ की पहली बुनियाद उनके अकाबिर की वह इबारतें है जो एहानते रसूल और इन्कारे ज़रूरयाते दीन पर मुशतमिल हैं। जिन्हें आप पिछले सफ़्हों में पूरी तफ़सील के साथ पढ़ चुके। अगर आपकी निगाह में हमारे ईमानी एहसासात की कोई क़ीमत है तो आप ने अच्छी तरह अन्दाज़ा लगा लिया होगा कि इन एहानत आमेज़ इबारतों के रद्दे अमल में उलमाऐ देवबन्द के ख़िलाफ़ हमारी नफ़रत व बेज़ारी सिर्फ़ जज़्बाए हुब्बे रसूल पर मबनी है और जब तक हम ज़िन्दा है ये जज़्बा भी ज़िन्दा रहेगा।

यही एक बुनियाद उन से हमारी अलाहिदगी के लिए बहुत काफ़ी थी जबकि ये मालूम करके आप हैरान रह जाऐंगे कि इस के अलावा उलमाऐ देवबन्द के कुछ मख़सूस अक़ाइद भी हैं जो ये फ़ासला बढ़ाने में निहायत अहम रोल अदा करते हैं। इन अक़ाइद की तफ़सील किताबों के हवालों के साथ नीचे मुलाहिज़ा फ़रमाऐं :-

(1) उम्मती अमल में अम्बिया से बढ़ जाते हैं। (तहज़ीरुन्नास)

(2) सरीह झूठ से अम्बिया का महफ़ूज़ रहना ज़रूरी नहीं है।
(तस्फ़ियतुल अक़ाइद)

(3) किज़्ब को शाने नबुव्वत के मनाफ़ी समझना ग़लत है।
(तस्फ़ियतुल अक़ाइद)

(4) अम्बिया को मआसी से मासूम समझना ग़लत है।
(तस्फ़ियतुल अक़ाइद)

(5) नमाज़ में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ ख़्याल

ले जाने से नमाज़ी मुश्रिक हो जाता है। (सिरातें मुस्तकीम)

(6) नमाज़ में नबी का ख़्याल ज़िना के ख़्याल और गधे और बैल के ख़्याल में डूब जाने से भी बद तर है। (सिरात मुस्तकीम)

(7) खुदा का झूठ बोलना मुमकिन है। (यकरोज़ी)

(8) खुदा को ज़मान व मकान से मुनज़्ज़ा समझना गुमराही है। (ईज़ाऊलहक़)

(9) जदूगरों के शोब्दे अम्बिया के मोअजिज़ात से बढ़कर होते हैं। (मनसबे इमामत)

(10) सहाबा किराम को काफ़िर कहने वाला सुन्नत जमाअत से खारिज नहीं है। (फ़तावा रशीदिया)

(11) मुहम्मद या अली जिसका नाम है वह किसी चीज़ का मुख़्तार नही। (तक़वियतुल ईमान)

(12) हर मख़लूक़ छोटा हो (जैसे आम बन्दे) या बड़ा (जैसे अम्बिया व औलिया) व अल्लाह की शान के आगे चमार से भी ज़यादा ज़लील है। (तक़वियतुल ईमान)

(13) जो हुजूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़यामत के दिन अपना वकील या सिफ़ारिशी समझता है वह अबु जहल के बराबर मुश्रिक है। (तक़वियतुल ईमान)

(14) रसूल बख़्श, नबी बख़्श, गुलाम मुईनुद्दीन, ग़ुलाम मुहयुद्दीन नाम रखना शिर्क है। (तक़वियतुल ईमान)

(15) "रहमतुल लिल आलमीन" होना हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मख़सूस नही है। उम्मती भी रहमतुल लिल आलमीन हो सकते हैं। (फतावएं रशीदिया)

(16) बुज़ुर्गाने दीन की फ़ातिहा का तबर्रुक खाने से दिल मुर्दा होता है। (फतावएं रशीदिया)

(17) हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमारे बड़े भाई हैं हम उनके छोटे भाई हैं। (तक़वियतुल ईमान)

(18) ये कहना कि खुदा व रसूल चाहेगा तो फ़लां काम हो जाएगा, शिर्क है। (बहिश्ती ज़ेवर)

(19) किसी नबी या वली के मज़ारात की ज़ियारत के लिए सफ़र करना, उनके मज़ार पर रोशनी करना, फ़र्श बिछाना, झाड़ू देना, लोगों को पानी पिलाना, उनके लिए वुज़ू और गुस्ल का इन्तिज़ाम करना, शिर्क है। (तक़वियतुल ईमान)

अपने कारेईन किराम से दरख़्वास्त करूंगा कि इन्साफ़ व दियानत के साथ आप देवबन्दी मक्तबे फ़िक्र के इन मख़सूस अक़ाइद पर गौर फ़रमाएं। इनमें से कुछ तो वह हैं जिन से अक़ीदए तक़दुस को ठेस पहुंचती है और कुछ वह हैं जो शाने मुनसबे रिसालत को मजरूह करते हैं और कुछ वह हैं जिन्हें सही मान लिया जाए तो दुनिया के नव्वे करोड़ मुसलमानों के ईमान व इस्लाम की सलामती ख़तरे में पड़ जाती है और बात यही तक नही रुकती बल्कि सदियों पर मुशतमिल माज़ी के वह लाखों अस्लाफ़ किराम भी ज़द में आ जाते हैं जिन्होंने इन अक़ाइद व आमाल के मुख़ालिफ़ सिम्त को इस्लामी अक़ाइद व आमाल की हैसियत से कुबूल किया है।

थोड़ी देर के लिए अहले बरेली को एक किनारे रखिए और अपने मज़हबी शुऊर की बुनियाद पर आप ख़ुद बताइए कि क्या इन अक़ाइद व आमाल की सेहत से आप इत्तिफ़ाक़ रखते हैं और बगैर किसी तरद्दुद के हां या नही में इस बात का दो टोक फ़ैसला कीजिए कि क्या आज का मुस्लिम मुआशिरा इन्ही अकाइद व आमाल की बुनियाद पर क़ायम है। अगर नही है और यक़ीनन नहीं है तो इन उलमाए हक़ के बारे में आप साफ़ साफ़ अपने ख़्याल का इज़हार कीजिए जिन्होंने उलमाए देवबन्द के इन खानाज़ाद अक़ाइद व आमाल से इख़्तिलाफ़ किया है और इस्लाम के एक पुर जोश मुहाफ़िज़ की हैसियत से उम्मत को इन गन्दे अक़ाइद आमाल से बचाने की भरपूर कोशिश की है और ठीक उसके मुख़ालिफ़ सिम्त में इस्लाम के सही अक़ाइद के साथ उन्हें मुनसलिक रखा है।

अब आप जमहूर मुस्लेमीन ही को जमहूर मुस्लेमीन ही यह फ़ैसला करना है कि इन उलमाए हक़ का ये अज़ीम कारनामा उनके हक़ में है या उनके ख़िलाफ़ है और अपने गिरां क़दर ख़िदमात के

ज़रिये इन उलमाए हक़ ने उम्मत में फ़ितना डाला है या उसे टूटने से बचाया है।

अगर इस हक़ीक़त से आप इत्तिफ़ाक़ करते है कि आज भी रुए ज़मीन के मुसलमानों का वही मज़हब है जिसकी हिमायत इन उलमाअ ने अपनी ज़बान और क़लम से की है तो इस हक़ीक़त से भी आपको इत्तिफ़ाक़ करना पड़ेगा कि मुसलमानों के सही पेशवा यही उलमाअ हैं जो लोग दुश्मन के परोपेगन्डे से मुतास्सिर होकर इन उलमाअ के खिलाफ़ तिर्फ़का अन्दाज़ी का इलज़ाम आयद करते है, वह मज़हबी तारीख़ में सबसे बड़े एहसान फ़रामोश कहलाने के मुस्तहिक़ है। आप न भी अपने आपको बरेलवी कहें जब भी आपको उलमाऐ बरेलवी के इस अज़ीमुश्शान किरदार का शुक्र गुज़ार होना पड़ेगा कि उन्होंने आपको देवबन्द के ग़लत मज़हबे फ़िक्र का शिकार होने से बचा लिया और उम्मते मुस्लिमा को सही अक़ाइद व आमाल के साथ मुनसलिक रखा।

उलमाऐ देवबन्द के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ की तीसरी बुनियाद

तीसरी बुनियाद के ज़िमन में उलमाऐ देवबन्द के वह फतावा और तहरीरात हैं जिनके ज़रिये उन्होंने मुसलमानों की मज़हबी रिवायात को हराम और बिदअत ज़लालत क़रार दिया है। नीचे आप उनकी तफ़सील मुलाहिज़ा फ़रमाऐं :-

(1) अम्बिया व औलिया के साथ तवस्सुल को वह हराम और गुनाह क़रार देते है।

(2) हुज़ूर अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हक़ में ब-अताऐ इलाही भी वह इल्मे गैब का अक़ीदा तस्लीम नही करते।

(3) तक़वियतुल ईमान की सराहत के मुताबिक़ वह हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में अक़ीदा रखते है कि मआज़ल्लाह वह मर कर मिट्टी में मिल गए।

(4) वह महफ़िले मीलाद के इन्कार और क़याम व सलाम को हराम क़रार देते हैं।

(5) बुज़ुर्गाने दीन और अमवाते मुस्लिमीन के लिए ईसाले सवाब और उर्स व फ़ातिहा को वह हराम कहते हैं।

(6) मजलिस ज़िक्रे शहादत हुसैन और गौस पाक की फ़ातिहा ग्यारहवी और ग़रीब नवाज़ की फ़ातिहा छटी को वह हराम कहते हैं।

(7) हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादते पाक के मौके पर वह खुशी मनाने और जुलूस के निकालने को हराम क़रार देते हैं।

(8) औलियाओं के मज़ार और मक़ाबिर सुल्हा पर गुम्बद की तामीर उनके नज़दीक हराम है।

(9) नाराए या रसूलुल्लाह और या नबी सलाम अलैक को वह हराम क़रार देते हैं।

(10) अक़ीक़ा व ख़तना और बिस्मिल्लाह की तक़रीबात में अज़ीज़ व अक़ारिब और अहबाब को जमा करना उनके नज़दीक नाजाइज़ है।

(11) तीजा, दसवां, चालीसवां और शबे बारात का हल्वा उनके नज़दीक नाजाइज़ है।

(12) शादी, ब्याह, मंगनी और चौथी में उनके नज़दीक न किसी को बुलाना जाइज़ है और न किसी के यहां जाना जायज़ है।

(13) शादी के मौके पर वह सेहरा बांधने को वह मुश्रिकाना फ़ेअल क़रार देते हैं।

(14) जो शख़्स औलियाओं के मज़ार पर चादर चढ़ाता हो, बुज़ुर्गों का उर्स करता हो, उसके लड़के के साथ किसी मुसलमान लड़की की शादी को वह हराम क़रार देते हैं। उसके जनाज़े में शरीक होने, उसकी बीमार पुरसी करने और उसे सलाम करने से भी ये लोग मना करते हैं।

(15) अरवाहे औलिया से फ़ैज़ हासिल करने और मदद तलब करने

को भी ये लोग हराम क़रार देते हैं।

(16) हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का नाम पाक सुनकर अंगूठा चूमने को भी ये लोग हराम क़रार देते हैं।

(17) रजब के महीने में इमाम जाफ़र सादिक़ की फ़ातिहा को भी ये लोग हराम कहते हैं।

(18) रमज़ानुल मुबारक में ख़त्म कुरआन के मौके पर मस्जिदों में चिरागां करने को भी ये लोग हराम कहते हैं।

(19) अमवाते मुस्लिमीन की क़ब्रों पर तारीख़े वफ़ात का पत्थर नस्ब करने को भी ये लोग हराम कहते हैं।

(20) नमाज़ जनाज़ा के बाद दुआ मांगने को भी ये लोग नाजाइज़ कहते हैं।

(21) ईद के दिन मुआनिक़ा करने और बग़ल-गीर होने को भी ये लोग हराम कहते हैं।

आप ही इन्साफ़ के साथ फ़ैसला करें

उलमाऐ देवबन्द के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ की ये तीसरी बुनियाद भी आपके सामने है। अब आप ही इन्साफ़ के साथ फ़ैसला करें कि क्या आप उलमाऐ देवबन्द के इन फ़तवों से मुत्तफ़िक़ हैं और क्या ये फ़तवे जमहूर मुस्लिमीन की रिवायात की मुख़ालफ़त में नहीं हैं और क्या हमारे मुआशिरे का मज़हबी और इज्तमाई निज़ाम इन फ़तवों से मजरूह नहीं होता। अगर होता है और यक़ीनन होता है तो आप ही फ़ैसला करें कि इन फ़तवों के मुताबिक़ आम मुसलमान सुबह से शाम तक अगर हराम ही का इरतिकाब करते रहते हैं तो हमारा इस्लामी मुआशिरा कहां है ?

यही वह मन्ज़िल है जहां वाज़ेह तौर पर आप उलमाऐ देवबन्द और उलमाऐ बरेली के बीच एक वाज़ेह लकीर खींचनी होगी कि उलमाऐ देवबन्द की सारी मेहनत इस बात पर ख़र्च हुई कि मुस्लिम मुआशिरे के हर फ़र्द को गुनाहगार व हराम कार साबित किया जाए और उलमाऐ बरेली ने अपने क़लम का सारा ज़ोर इस बात पर लगाया

कि जो चीज़ अल्लाह और उसके नबी के नज़दीक हराम नही है उसे कौन हराम कह सकता है। जिन मज़हबी और अख़लाकी रिवायात पर हमारा मुआशिरा खड़ा है उन्हें बिला वजह हराम क़रार देना इल्म और फ़िक्र की गुमराही भी है और मुस्लिम दुश्मनी भी।

हमारे कारेईने किराम जज़्बाऐ इन्साफ़ से काम लें तो उन्हें मानना पड़ेगा कि उलमाऐ बरेली की सारी कोशिश मुसलमानों की हिमायत में है जबकि उलमाऐ देवबन्द की सारी कोशिशें मुसलमानों की मुखालफ़त में है।

अब इससे बढ़कर नाक़दरी और ज़्यादती क्या होगी कि जो लोग आप पर हमला आवर है वह आपके सब से बड़े ख़ैर ख़्वाह हो गए और जो उलमाअ अपनी जान और इज़्ज़त खतरे में डालकर आपका दिफ़ाअ कर रहे है, उन्हें आप दुश्मन समझते है।

हासिले गुफ़्तगू

इख़्तिलाफ़ की पहली बुनियाद से लेकर यहां तक जो कुछ हम ने आप के सामने पेश किया है उसका मुदआ सिर्फ इतना है कि आप इख़्तिलाफ़ात की नौइयत को पूरी तरह समझ लें और हमारी बेरहमी व बेज़ारी और अलाहिदगी को किसी और जज़्बे पर महमूल न करें। उलमाऐ देवबन्द के गुस्ताख़ क़लम का हमला हमारी अपनी ज़ात पर होता तो अफ़ू व दरगुज़र और मुसालिहत की बहुत सी राहें निकल सकती थी लेकिन जब उन्होंने मनसबे रिसालत की अज़मतों को निशाना बनाकर अल्लाह और उसके प्यारे नबी को अज़ियत पहुंचाई है तो अब उनके मुताल्लिक़ जो फ़ैसला होगा वहीं से होगा।

किसी भी आलिम के साथ हमारा रिश्ता ब्राहेरास्त नही है बल्कि नबी के तवस्सुत से है, जब अपना रिश्ता वहीं से कोई काट ले तो हमारे साथ रिश्ता जोड़ने का कोई सवाल ही पैदा नही होता। नबी पाक के साथ वफ़ादारी के जज़्बे ही का ये तक़ाज़ा है कि जब

तक हमारे जिस्म में जान है, न ये कि हम इन गुस्ताखों से अपना रिश्ता तोड़ेंगे बल्कि हमारी कोशिश जारी रहेगी कि हर मोमिन वफ़ादार का रिश्ता उनसे मुन्क़तअ़ करते रहें।

हमारे ख़िलाफ़ उलमाऐ देवबन्द के इलज़ामात

उलमाऐ देवबन्द के साथ हमारे इख़्तिलाफ़ात की तारीख अधूरी रह जाएगी अगर उन इलज़ामात का ज़िक्र न करें जो उलमाऐ देवबन्द ने हमारे ख़िलाफ़ आइद किए हैं।

हमारे ख़िलाफ़ उनका सबसे बड़ा इलज़ाम ये है कि हमने साहिबे इलम व फ़ज़्ल उलमाअ की तकफ़ीर की है और हम कुफ़्र का फ़तवा देने में बहुत बेबाक और ग़ैर मुहतात वाक़ेअ हुए है और अपने मसलक में बहुत शिद्दत पसन्द और तआस्सुबी हैं। इस इलज़ाम के दिफ़ाअ में इस से ज़्यादा और हम कुछ नही कहना चाहते कि हमारी किताब "हस्सामुल हरमैन" में सिर्फ़ पांच आदमियों के ख़िलाफ़ ये इलज़ाम एहानते रसूल व इन्कारे ज़रूरयाते दीन कुफ़्र के फ़तवे सादिर किए गए हैं। जिनपर हरमैन तय्यबैन और बलादे अरब के अकाबिर उलमाअ ने भी अपनी महरे तौसीक़ साबित फ़रमाई।

उनमें चार तो यही अकाबिर उलमाअ देवबन्द हैं जिनका ज़िक्र पहली बुनियाद में गुज़र चुका है और पांचवां मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी कज़्ज़ाब है।

अब अगर कोई अपनी शामते अमल से इन पांचों में से किसी के भी कलमाते कुफ़्रिया की हिमायत करता है तो उसके लाज़मी नताइज और वाजिबी ताअज़ीरात का ज़िम्मेदार वह खुद है। उलमाऐ बरेली को इस बात से कोई दिलचस्पी नही है कि बिला वजह किसी को दायरा इस्लाम से खारिज किया जाए। एहानते रसूल और कलमऐ कुफ़्र की हिमायत करके अपनी आक़िबत बर्बाद करने का इन्तिज़ाम वह खुद करते है। किसी और को मतऊन करने से क्या फ़ायदा।

एक ज़रूरी नुक्ता

इस मक़ाम पर इस नुक्ते की वज़ाहत ज़रूरी समझता हूं कि जिस तरह एक ग़ैर मुस्लिम को कलमए ईमान व इस्लाम के इक़रार के बाद मुस्लिम समझना ज़रूरी है उसी तरह एक मुस्लिम को अगर वह मआज़ल्लाह कुफ़्र का मुरतकिब हो जाए तो उसे ग़ैर मुस्लिम समझना दीन ही का एक फ़रीज़ा है।

मख़्सूस हालात में ये नाखुशगवार फ़रीज़ा जिस तरह उलमाए बरेली को अन्जाम देना पड़ा है, उलमाए देवबन्द भी इस फ़र्ज़ की अदाएगी में किसी से पीछे नहीं हैं। सबूत के लिए मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी की मशहूर किताब "हकीमुल उम्माह" में मौलाना अमीन अहमद इस्लाही का ये ख़त मुलाहिज़ा फ़रमाएं। ये ख़त उस दौर का है जब मौलाना इस्लाही मदर्सतुल इस्लाह, सराए मीर ज़िला आज़मगढ़ के मुन्तज़िम थे। मौसूफ़ के ख़त का ये हिस्सा ख़ास तौर पर पढ़ने के क़ाबिल है :-

> "मौलाना थानवी का फ़तवा छप गया है कि मौलाना शिबली नोमानी और मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही काफ़िर हैं और चूंकि मदर्सा इनही दोनों का मिशन है इसलिए मदर्सतुल इस्लाह मदर्सए कुफ़्र व ज़िन्दिक़ा है। यहां तक कि जो उलमाअ इस मदर्से के (तब्लीग़ी) जलसों में शिर्कत करें वह भी मुल्हिद व बेदीन हैं।" (हकीमुल उम्माह पेज-475)

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी थानवी साहिब के चेले व ख़लीफ़ा हैं। इसलिए मौलाना अमीन अहसन इस्लाही का ख़त मिलने के बाद उन्होंने एक मौअतमिद की हैसियत से थानवी साहिब को एक तफ़सीली ख़त लिखा जिसमें उन्होंने मौलाना शिबली नोमानी और मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही की तरफ़ से सफ़ाई पेश करते हुए उनकी इबादत व रियाज़त, उनकी नमाज़ तहज्जुद और उनके ज़ुहद व तक़वा को उनके इस्लाम व ईमान के सबूत में पेश किया था। उनका मक़सद ये था कि ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ कुफ़्र का फ़तवा हलक़ के नीचे नहीं उतरता। थानवी साहिब ने उनके ख़त का जो जवाब दिया वह ये है :-

"ये सब आमाल व अहवाल हैं। अक़ाइद उनसे जुदागाना चीज़ हैं। सेहते अक़ाइद के साथ फ़सादे आमाल व अहवाल और फ़सादे अक़ाइद के साथ सेहते आमाल व अहवाल जमा हो सकता है।" (हकीमुल उम्माह पेज-476)

इस जवाब का सिवाए इसके और क्या मतलब हो सकता है शोहरते इल्म व कमाल और फ़ज़्ल व तक़वा के बावजूद मौलाना शिबली नोमानी और मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही के खिलाफ़ मौलाना थानवी ने कुफ़्र का जो फ़तवा सादिर किया है वह सही है। थानवी साहिब के चाहने वाले इस फ़तवे को सही साबित करने के लिए यही कोशिश करेंगे कि मौलाना थानवी ने इन दोनों हज़रात की तहरीर या तक़रीर में कुफ़्र की कोई बात ज़रूरर देखी होगी बग़ैर किसी शरई वजह के उन्होंने कुफ़्र का फ़तवा हरगिज़ सादिर नहीं किया होगा।

अब यही बात अगर हम थानवी साहिब और दूसरे अकाबिरे देवबन्द पर उलट दें कि उन हज़रात के ख़िलाफ़ भी जो कुफ़्र का फ़तवा हरमैन तय्यबैन से सादिर हुआ वह भी बिला वजह नहीं था। तकफ़ीर की कोई शरई वजह उनकी नज़र में होगी। जैसा कि पहली बुनियाद में इसकी सारी तफ़सील आपके सामने बयान की जा चुकी है। अगर मौलाना शिबली नोमानी और मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही के इल्म और फ़ज़्ल और ज़ुहद व तक़वा की शोहरत, उनकी तकफ़ीर से मानेअ नहीं होती तो अकाबिरे देवबन्द के हक़ में आसमान से कौन सी वही नाज़िल होती है कि कुफ़्र और एहानत रसूल के जुर्म के इरतिकाब के बावजूद उन्हें तकफ़ीर से मुस्तसना रखा जाएगा।

तसल्लुब और शिद्दत पसन्दी के इलज़ाम का जवाब

हमारे खिलाफ़ उलमाए देवबन्द का ये भी इलज़ाम है कि हम अपने मस्लक में निहायत मुतासल्लिब और शिद्दत पसन्द वाक़ेअ हुए हैं। इस इलज़ाम का इससे ज़्यादा मौज़ूं और मुअस्सिर जवाब कोई और नहीं हो सकता कि हम उन्हें आईना दिखाएँ कि आप खुद अपनी

तस्वीर उस आईने में देख लें फिर किसी पर उंगली उठाऐं।

अभी मौलाना अमीन अहसन इस्लाही के खत में थानवी साहिब का फ़तवा आप पढ़ चुके हैं कि मदर्सतुल इस्लाह सराए मीर भी चूंकि इन्ही काफ़िरों का मिशन है इसलिए वह भी मदर्सए कुफ़्र व ज़िन्दिका है यहां तक कि जो उलमाअ इस मदर्से के जलसों में शिर्कत करें वह भी मुल्हिद और ज़िन्दीक़ हैं।

अब आप ही फ़ैसला करें कि इससे ज़्यादा मस्लक की शिद्दत पसन्दी और क्या होगी कि थानवी साहिब अपने मस्लक में इतने शिद्दत पसन्द हैं कि जिन लोगों को वह बद दीन समझते हैं उनकी तहरीर भी वह अपने लोगों को पढ़ने नही देते। "कमालाते अशरफ़िया" नामी किताब में से उनका ये मल्फ़ूज़ नक़्ल करता हूं :-

"बद दीन आदमी अगर दीन की भी बातें करता है तो उनमें ज़ुलमत लिपटी होती है। उनकी तहरीर के नक़ूश में भी एक गोना ज़ुलमत लिपटी होती है। इसलिए बेदीनों की सोहबत और बेदीनों की किताबों को हरगिज़ नही पढ़ना चाहिए।" (कमालाते अशरफ़िया पेज-55)

अब हमारी मज़लूमी के साथ इन्साफ़ कीजिए कि जिन लोगों को एहानते रसूल और ज़रूरयाते दीन के इन्कार के इलज़ाम में हम बे दीन समझते हैं, अगर हम भी उनकी सोहबत में उनकी तहरीरों और तक़रीरों के बारे में यही शिद्दत इख़्तियार करें तो हम क्यों लाइक़े गर्दन ज़नी ठहराऐ जाऐं शरीअत की जो मसलेहत उनके सामने है वह हमारे सामने भी क्यों नही होनी चाहिए ?

शिद्दत पसन्दी की एक और मिसाल

जो लोग नदवा की तारीख़ से वाकिफ़ हैं वह अच्छी तरह जानते होंगे कि देवबन्द के अकाबिर नदवा के सख़्त ख़िलाफ़ थे। यहां तक कि नदवा के नाज़िम मौलाना मुहम्मद अली मूंगेरी जब नदवा के सालाना इजलास में शिर्कत की दावत लेकर मौलाना रशीद अहमद गंगोही साहिब से मिलने देवबन्द गए तो उन्होंने न सिर्फ़ दावत कुबूल करने से इन्कार किया बल्कि मिलने से भी इन्कार कर दिया। यहां तक

कि जब मौलाना मुंगेरी की तरफ़ से इस्रार हुआ कि आप खुद शरीक नही हो सकते है तो कम से कम अपने किसी आदमी को शिर्कत की इजाज़त दे दीजिए तो इसके जवाब में उन्होंने फ़रमाया :-

"मुझे मालूम कराया गया है कि अन्जाम इसका बखैर नही, इस वास्ते मैं अपनी तरफ़ से किसी को इजाज़त नहीं दे सकता।" (तज़्करतुर रशीद-जिल्द 2-पेज 205)

"अन्जाम इसका बख़ैर नही" इस इल्हामे खुदावन्दी का इससे ज्यादा वाज़ेह सबूत और क्या हो सकता है कि आज नदवा पर देवबन्दी फ़िरके का तसल्लुत हो गया है और अन्जाम की दहशतनाक तस्वीर और नुमायां हो जाएगी अगर इसका आग़ाज़ भी आप नज़र में रखें।

मौलाना शिबली नोमानी के बारे में अहले इल्म अच्छी तरह जानते है कि वह नदवा के बानियों में एक मुअस्सिर शख़्सियत के मालिक थे। उनका एक मज़मून मकालाते शिबली के हिस्सा शशुम में छपा है ये मज़मून इस वक़्त का है जब मौलाना शिबली से नदवा के नाज़िम की चश्मक हो गई थी। बतदरीज इख़्तिलाफ़ात यहां तक बढ़े कि मौलाना की हिमायत में नदवा के तलबा ने स्ट्राइक कर दिया। इसके बाद की सर गुज़श्त खुद मौलाना के क़लम से पढ़िए। लिखते है :

"इन इसी हालत में मौलूद शरीफ़ का ज़माना आया और तलबा ने जैसा हमेशा का मामूल था मौलूद शरीफ़ करना चाहा लेकिन इस ख़्याल से कि मौलूद शरीफ़ मैं बयान करूंगा वह मौलूद से रोके गए और तीन दिन तक ये मरहला रहा। आखिर लोगों ने समझाया कि मौलूद के रोकने से शहर में आम ब्रहमी फैलेगी मजबूरन शर्तों और कैदों के साथ मौलूद शरीफ़ की मन्ज़ूरी दी गई।" (मकालाते शिबली जिल्द-6 पेज-131)

लेकिन क्या आज भी दारूल उलूम नदवतुल उलमाअ के अहाते में महफ़िले मौलूद शरीफ़ के इनअेक़ाद की इजाज़त मिल सकती है ? क्या आज भी हमेशा का ये मामूल वहां के तलबा में ज़िन्दा

और बाक़ी है। नहीं हरगिज़ नहीं, क्योंकि अब नदवा पर अहले देवबन्द का ग़ासिबाना क़ब्ज़ा है।

ग़ौर फ़रमाइये ! वह आग़ाज़ था और ये अन्जाम है और ग़ज़ब ये है कि गंगोही साहिब का इल्हाम अन्जाम ही के बारे में है। आग़ाज़ के बारे में नहीं है।

शिद्दत पसन्दी का एक और मकरूह नमूना

देवबन्दी मज़हब के मशहूर पेशवा मौलवी रशीद अहमद गंगोही अपने मस्लक में कितने शिद्दत पसन्द थे उसकी एकीमसाल नदवा के सिलसिले में आप पढ़ चुके हैं। अब उनकी सख़्त मिज़ाजी का एक और मकरूह नमूना नीचे मुलाहिज़ा फ़रमाइये :-

बुज़ुर्गाने दीन और उनके मज़ाराते तय्यिबात से उन्हें इतनी सख़्त नफ़रत थी कि वह उनके उर्सों से भी सख़्त नफ़रत करते थे।

सिलसिला आलिया चिश्तिया साबरिया के मशहूर बुज़ुर्ग कुतुब आलम हज़रत अब्दुल कुद्दूस गंगोही का मज़ार मुबारक इसी गंगोह में है जो मौलवी रशीद अहमद साहिब का वतन मालूफ़ है। उनकी तरफ़ से मौलवी साहिब के दिल में कितनी कुदूरत थी और वह उनके उर्से शरीफ़ से किस क़दर नफ़रत करते थे इसका अन्दाज़ा आप मौलवी ज़करिय्या, शेख़ुल हदीस, सहारनपुर की इस तहरीर से लगाइये। मौसूफ़ अपनी किताब "तारीख़ मशायख़ चिश्त" में लिखते हैं :-

> "हज़रत शाह अब्दुल कुद्दूस का उर्स जिसके बन्द करने पर आप क़ादिर न थे वह इस दर्जा आप को अज़िय्यत पहुंचाता था कि आपको सब्र करना दुश्वार था। अव्वल अव्वल आप इन दिनों गंगोह छोड़ते और रामपुर तशरीफ़ ले जाते, मगर आख़िर में इस अज़िय्यत क़ल्बी के बर्दाश्त करने की आप को तकलीफ़ दी गई तो ये ज़माना भी आप को अपनी ख़ान्क़ाह में रह कर गुज़ारना पड़ा।
>
> मौसमे उर्स में आपको अपने मुनतसिबीन का आना भी इस दर्जा नागवार होता था कि आप अकसर नाराज़ हो जाते और उन से बातचीत करना छोड़ देते। एक बार जनाब मौलवी मुहम्मद सॉलेह

साहिब जालन्धरी जो आप के खुलफ़ा और मजाज़ीन में से थे, आपकी ज़ियारत के शौक़ में बेताब होकर घर से निकल खड़े हुए। इत्तिफ़ाक़ से उर्स का ज़माना था। अगरचे आनेवाले ख़ादिम को इसका वहम भी न गुज़रा, मगर हज़रत इमाम रब्बानी ने बजुज़ सलाम का जवाब देने के उनसे ये भी न पूछा कि रोटी खाई या नही और कब आए और क्यों आए ?

मौलवी मुहम्मद सॉलेह साहिब को दो दिन इसी तरह गुज़र गए। हज़रत का रूख़ फिरा हुआ देखना उनको इस दर्जे शाक़ गुज़रता था कि इसको उन्ही के दिल से पूछना चाहिये। आख़िर इस हालत की ताब न लाकर हाज़िरे ख़िदमत हुऐ और रो रो कर अर्ज़ किया कि हज़रत मुझ से क्या कुसूर हुआ जिसकी ये सज़ा मिल रही है। माज़रत के तौर पर ये अर्ज़ किया कि हज़रत खुदा शाहिद है मुझे तो उर्स वग़ैरह के साथ इब्तिदा ही से शौक़ नहीं। वल्लाह न इस वक़्त मै इस ख़्याल से गंगोह आया और न आजकल यहां उर्स होने का मुझे इल्म था।

हज़रत इमाम रब्बानी ने फ़रमाया कि अगरचे तुम्हारी नियत उर्स में शरीक होने की नही थी मगर जिस रास्ते में दो आदमी उर्स के आने वाले आ रहे थे उनमें तीसरे तुम थे।" (तारीख़ मशाइख़ चिश्त पेज-294)

अब क़ारअीन किराम ही इन्साफ़ फ़रमाऐं कि इससे बढ़कर अपने मस्लक में शिद्दत पसन्दी और क्या हो सकती है कि उनका मुरीद उर्स शरीफ़ में शिर्कत की ग़र्ज़ से गंगोह नही गया था बल्कि अपने पीर की मुलाकात के लिए वहां हाज़िर हुआ था, लेकिन सिर्फ़ इतनी सी बात पर कि वह उर्स के ज़माने में गंगोह क्यों आया उसे ऐसी ज़िल्लत आमेज़ सज़ा दी कि जैसे उससे बहुत बड़ा गुनाह सरज़द हो गया हो।

अब सवाल ये है कि मौलवी रशीद अहमद गंगोही को कुतुबे आलम के उर्स से इतनी ही नफ़रत थी तो वह सिलसिलए चिश्तिया साबरिया में मुरीद ही क्यों हुए जबकि इस सिलसिले के सारे अकाबिर जिनमें ख़्वाजऐ

ख़्वाजगाने चिश्त हज़रत ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती से लेकर कुतुबुल अक़ताव हज़रत ख़्वाजा कुतुबुद्दीन बख़्तियार, बावा फ़रीद शकर गंज, महवूबे इलाही हज़रत निज़ामुद्दीन, हज़रत साविर पाक, हज़रत चिराग़ दिल्ली, हज़रत बन्दा नवाज़ गैसू दराज़, हज़रत तुर्क पानीपती, हज़रत शैख़ अब्दुल हक़ रूदुलवी, हज़रत शैख़ अब्दुल कुद्दूस गंगोही, हज़रत शैख़ जलालुद्दीन थानेसरी, हज़रत अख़ी सिराज, हज़रत अलाउल हक़ पन्डवी और हज़रत सुलतान अशरफ़ जहांगीर समनानी तक कौनसा ऐसा बुज़ुर्ग है जिसने अपने पीरों का उर्स शरीफ़ न किया हो।

ताज्जुब है कि मौलवी रशीद अहमद गंगोही सिर्फ़ इतनी सी बात पर कि उर्स के ज़माने में उनका मुरीद क्यों आया उससे मुंह फेर लिया। लेकिन सिलसिलए चिश्तिया के जो मशाइख़ कब्वार सारी ज़िन्दगी अपने पीरों का उर्स करते रहे उन्हें वह अपना दस्तगीर मानते हैं। ये सवाल गंगोही साहिब के सर पर तलवार की तरह लटक रहा है कि जो पीर गंगोही साहिब के मस्लक के मुताबिक़ खुद मुहर्रिमात और बिदआत में मुब्तिला हो वह किसी का हाथ पकड़कर खुदारसी की मन्ज़िल तक क्योंकर पहुंचा सकता है।

हमारे ख़िलाफ़ उलमाऐ देवबन्द का दूसरा इलज़ाम

जिन लोगों के एतक़ादी मुफ़ासिद पर इमाम अहले सुन्नत आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी ने अपने क़लम का नश्तर चलाया था वह ज़ख़्मों की ताब न लाकर ज़िन्दगी भर कराहते रहे। इन्तक़ाम हर ज़ख़्मी का फ़ितरी तक़ाज़ा है और फ़ितरत ही का यह भी दाइया है कि जब आदमी दुश्मन पर क़ाबू नही पाता तो दुश़नाम तराशियों पर उतर आता है। चुंनांचे आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। इल्म व इस्तदलाल के ज़रिये जो लोग अपने ख़िलाफ़ एहानते रसूल के इलज़ाम का दिफ़ाअ नही कर सकते उन्हें अपने जज़्बाऐ इन्तक़ाम की तस्कीन की यही सूरत नज़र आई कि जिस तरह भी मुमकिन हो "मौलाना अहमद रज़ा खां फ़ाज़िल बरेलवी" की शख़्सियत को मजरूह किया जाए।

इल्मी जलालत और किरदार के तक़द्दुस पर उंगली रखने की कोई जगह न मिल सकी तो ये इलज़ाम तराशा गया कि उन्होंने सुन्नतों

की बजाए बिदअतों को जिन्दा किया है हालांकि मुजद्दिद होने की हैसियत से अहयाएं सुन्नत और इम्तियाज़ मियानं हक़ व बातिल ही आला हज़रत का असल कारनामा है जिस की बेशुमार मिसालें उनके फतावा की ज़ख़ीम मुजल्लिदात में जगह जगह बिखरी हुइ हैं।

इस तरह के इलज़ाम तराशने वालों में शेख़ देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद साहिब सदर जमीअत उलमाऐ हिन्द का नाम सरे वर्क है। उन्होंने अपनी किताब "अश्शहाबुस साक़िब" में आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी को पानी पी पीकर तक़रीबन छे: सौ गालियां दी हैं। उन्ही में एक गाली "मुजद्दिदुल बिदआत" की भी है। जिससे उनकी किताब का हर वर्क़ दाग़दार है।

लेकिन इस मक़ाम पर आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी के किरदार की अरजमन्दी को बार बार सलाम करने को जी चाहता है कि उनके ख़िलाफ़ किज़्ब बयानी और इलज़ाम तराशी का कारोबार करने वाले अपनी हज़ार दुश्मनी के बावजूद अब तक ये इलज़ाम उन पर आयद नही कर सके कि वह बिदअतों के मोजिद भी हैं।

मुजद्दिद और मोजिद के बीच जो मानि का फ़र्क़ है वह अहले इल्म पर मख़्फ़ी नही है। अब जो लोग आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी को "मुजद्दिदुल बिदआत" कहते हैं उन्हें ये बताना होगा कि जिन बिदआत को उन्होंने जिन्दा किया है उनका मोजिद कौन है ? और अपनी कारगुज़ारियों की ये रिपोर्ट भी पेश करनी होगी कि उलमाऐ देवबन्द ने इन मोजिदीन को कितनी गालियां दी हैं।

इस वक़्त मेरा मौज़ू ये नही है वर्ना मेरे पास उन बिदआत की एक लम्बी फ़हरिस्त है जिनकी ईजाद का सेहरा खुद उलमाऐ देवबन्द के सर पर बन्धता है। वक़्त अगरचे नही है लेकिन मक़ाम की मुनासिबत से उलमाऐ देवबन्द की ईजाद करदा बिदआत की तरफ़ एक हल्का सा इशारा करके गुज़रना चाहता हूं ताकि इलज़ाम बग़ैर सनद के न रहे। नीचे उन बिदअतों के चन्द नमूने मुलाहिज़ा फ़रमाऐं :-

(1) दफ़ाऐं बला और क़ज़ाऐ हाजात के नाम पर मदर्सा की माली मुनाफिअत के लिए ख़त्म बुखारी शरीफ़ की बिदअत का मोजिद कोई और नही बल्कि खुद देवबन्द का दारूल उलूम है।

(2) नमाज़ जनाज़ा के लिए इन्तज़ामी मस्लिहत की बुनियाद पर नही बल्कि ग़लत ऐत्क़ाद की बुनियाद पर एहातऐ दारूल उलूम में एक जगह मख़सूस करने की बिदअत का मोजिद कोई और नहीं बल्कि खुद देवबन्द का दारूल उलूम है।

(3) मुस्लिम मय्यत के कफ़न के लिए "खद्दर" की शर्त लगाने और खद्दर के बग़ैर नमाज़ जनाज़ा पढ़ने और पढ़ाने से इन्कार कर देने की बिदअत का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद शैख देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद है।

(4) विरासत अम्बिया की सनद तक़्सीम करने के लिए ऐहतमामी व तदाई के साथ सद साला इजलास मुनअक़िद करने और एक ना-महरम और मुश्रिक औरत को स्टेज पर बुलाकर उसे कुर्सी पर बिठाने और अपने मज़हबी अकाबिर को उसके क़दमों में जगह देने की बिदअते सइया का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद देवबन्द का दारूल उलूम है।

(5) दीनी दर्सगाह के एहाते में मुश्रिकाना अलफ़ाज़ पर मुशतमिल क़ौमी तराने के लिए "क़यामे ताअज़ीमी" की बिदअत सइया का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद देवबन्द का दारूल उलूम है।

(6) कांग्रेस उम्मीदवार को कामयाब बनाने के लिए इन्तिहाई कोशिश को मज़हबी फ़रीज़ा समझने की बिदअत का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि देवबन्द का दारूल उलूम है

(7) अपने अकाबिर की मौत पर "ऐहतमाम तदाओ" के साथ जलसएं ताअज़ियत मुनअक़िद करने और ज़लालत व अबातील पर मुशतमिल मन्ज़ूम मर्सिया पढ़ने और पढ़ाने की बिदअत का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद देवबन्द का दारूल उलूम है।

(8) बिल इल्तिज़ाम किसी मुताअय्यन नमाज़ के बाद नमाज़ियों को रोक कर उनके सामने तब्लीग़ी निसाब की तिलावत करने की बिदअत का मोजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद उलमाऐ देवबन्द है।

(9) कलमा व नमाज़ की तब्लीग़ के नाम पर चिल्ला और गश्त

करने और कराने की बिदअत का मौजिद भी कोई और नहीं बल्कि खुद उलमाए देवबन्द हैं।

(10) दारूल उलूम देवबन्द में सदर जम्हूरिया की आमद के मौके पर कौमी तराने के एहतराम में खड़े होने का हुक्म सादिर करने वाले भी अकाबिरे देवबन्द हैं जो उस वक्त स्टेज पर मौजूद थे। अब वह ही बताऐं कि ये बिदअत की कौनसी क़िस्म है। ये और इसी तरह की बेशुमार बिदआत व मुनकिरात हैं जिनकी ईजाद का सेहरा उलमाए देवबन्द के सर है, लेकिन इसके बावजूद वह लोग इमाम अहले सुन्नत आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी को बिदअती कहते नहीं थकते।

उलमाए देवबन्द हर नौईजाद चीज़ पर बे-दरीग़ बिदअत ज़लालत होने का हुक्म सादिर कर देते हैं और उसे हराम क़रार देकर मुसलमानों में इख़्तिलाफ़ व इन्तिशार के नए नए फ़ितने बरपा कर देते हैं।

मिसाल के तौर पर महफ़िले मीलाद को ही ले लीजिए। इसके बिदअत, ज़लालत और हराम होने की उनके पास सबसे बड़ी दलील ये है कि वह सात सौ बरस की नौ॰ ईजाद बिदअत है। मौजूदा हैइयत के साथ न वह अहदे रिसालत में मौजूद थी और न अहदे सहाबा व ताबिईन में। लेकिन जब उनसे मालूम किया जाता है कि अगर आप हज़रात के यहां सिर्फ़ नौईजाद की बुनियाद पर महफ़िले मीलाद बिदअत है तो वह जिन अज्ज़ा पर मुशतमिल है उनमें से किसी एक चीज़ के बारे में निशानदही कीजिए कि वह किसी सुन्नत को मिटाता है या शरीअत के किसी क़ायदे कुल्लिया के तहत ममनूआत के ज़ुमरे में आता है तो सिवाए खामोशी के उनके पास कोई जवाब नहीं होता।

मिसाल के तौर पर महफ़िले मीलाद के अज्ज़ा ये हैं :-

1. ऐलान
2. फ़र्श व तख़्त और शामियाना वग़ैरह
3. रोशनी
4. नुज़ूर व इतरयात व गुलाब
5. शीरीनी
6. मजमा मुस्लिमीन
7. ज़ाकिर व मीलाद ख़्वाँ

8. ज़िक्रे इलाही व ज़िक्रे रसूल
9. क़याम व सलाम

इन सारे अज्ज़ा में से सिवाये क़याम व सलाम के कोई जुज़ ऐसा नहीं है जिस पर इन हज़रात का जलसए सीरत, जलसए वाअज़, या जलसए तब्लीग, या जलसए दस्तार बन्दी या जलसए तन्ज़ीम व जमाअत पर मुशतमिल न हो। ऐलान आम भी है, फ़र्श व तख़्त और शामियाना भी है, रोशनी भी है, मजमा भी है, वाअज़ व मुक़र्रीन भी है। इसलिए इनमें से किसी चीज़ को बिदअत कहकर उसे हराम क़रार देने के मानि ये हैं कि वह खुद अपने ही जलसों के खिलाफ़ हराम होने का फ़तवा दें।

अब रह गया मामला क़याम व सलाम का तो ये भी उनके यहां वजहे हुरमत नहीं है क्योंकि बग़ैर क़याम भी महफ़िले मीलाद उन के यहां हराम है जैसा कि फ़तावा रशीदिया में उनके मशहूर पेशवा मौलवी रशीद अहमद गंगोही ने तहरीर फ़रमाया है और अगर यह कहा जाए कि महफ़िले मीलाद की हुरमत की वजह ग़लत रिवायतों का पढ़ना या बयान करना है तो मैं अर्ज़ करूंगा कि व रिवायात सहीहा भी महफ़िले मीलाद उनके यहां हराम है जैसा कि अपने फ़तावा में मौलवी रशीद अहमद गंगोही इसकी भी तस्रीह कर चुके हैं।

मैंने बहुत से मुनाज़िरों में देवबन्दी उलमाअ से सवाल किया कि जब हमारी महफ़िले मीलाद और आप हज़रात के जलसए वाअज़ के अज्ज़ा एक ही हैं तो आपका जलसए वाअज़ जायज़ और हमारी महफ़िले मीलाद हराम क्यों है ? सिर्फ़ इस वजह से तो कोई चीज़ हराम या हलाल नहीं हो सकती कि आपके जलसे का नाम जलसए वाअज़ या जलसए सीरत है और हमारे जलसे का नाम जलसए मीलाद है।

जब इन हज़रात से कोई जवाब न बन पड़ा तो मैंने अर्ज़ किया कि एक ही वजहे फ़र्क़ मेरी समझ में आती है और वह ये है कि हुज़ूर सरापा नूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादत बा-सआदत के मौक़े पर जब सारी कायनात में खुशी के डंके बज रहे थे तो शैतान लईन के घर में मातम बरपा था। वह शिद्दते ग़ैज़ में अपने सर

पर ख़ाक डाल रहा था।

उसे हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादत बा-सआदत से तकलीफ़ पहुंची थी। बहुत मुमकिन है कि उसकी पैरवी में आप हज़रात को ज़िक्रे विलादत से तकलीफ़ पहुंचती हो क्योंकि वाक़िआ तो गुज़र चुका अब तो सिर्फ़ उसका ज़िक्र ही बाक़ी रह गया है। आप हज़रात देवबन्द में अपने दारूल उलूम का जश्न सद साला मनाते हैं तो शरीअत आपका हाथ नहीं पकड़ती और हमारे जश्न ईद मीलादुन नबी पर आपका दारूल उलूम गरजने और बरसने लगता है। सच कहा है कहने वालों ने कि जब किसी की ज़ात से दिल में किसी तरह की जलन पैदा हो जाती है तो उसके ज़िक्र से भी दिल जलने लगता है।

एक चुभता हुआ सवाल और उसका जवाब

मेरी ये तहरीर पढ़ने के बाद हर शख़्स के दिमाग़ में ये सवाल ज़रूर उभरेगा कि हिन्दुस्तान में देवबन्दी फ़िरक़े के अलावा और भी बहुत सारे बातिल फ़िरक़े हैं लेकिन क्या वजह है कि किसी और फ़िरक़े के ख़िलाफ़ उलमाए अहले सुन्नत इस तरह सफ़आरा नज़र नही आते जैसी सफ़बन्दी उनके यहां अहले देवबन्द के मुक़ाबले में नज़र आती है।

इस सवाल का जवाब देने से पहले ये बता देना ज़रूरी समझता हूं कि बिहम्दिहि तआला उलमाए अहले सुन्नत ने हर बातिल फ़िरक़े के ख़िलाफ़ तहरीर व तक़रीर और बहस व मुनाज़िरा के ज़रिये रद्द व इब्ताल के फ़राइज़ जिस गरम जोशी और दयानत दारी के साथ अन्जाम दिये हैं वह मेहरे नीम रोज़ की तरह रोशन है। दीने हक़ के ख़िलाफ़ उठने वाले फ़ितने की सरकूबी के सिलसिले में हमने कभी अहले ज़माना के साथ कोई समझौता नहीं किया है। शियाओं, क़ादियानियों और ग़ैर मुक़ल्लिदीन वग़ैरह के रद्द में इमाम अहले सुन्नत आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी के बहुत सारे रिसाले लाखों की तादाद में शायअ हुए और हो रहे हैं। उनके बाद उनके खुलफ़ाअ, तलामिज़ा और मुतवस्सिलीन व मुत्तबेईन ने तहरीरात व ख़ुतबात के ज़रिये जो ख़िदमात अन्जाम दी हैं

उनके असरात से ज़मीन का कोई खित्ता भी खाली नही है। ऐसी बात हरगिज़ नही है कि दूसरे फ़िरक़ाऐ बातिला के लिए कोई नर्म गोशा हमारे दिलों में मौजूद है।

देवबन्दी फ़िरक़े के ख़िलाफ़ शिद्दत पसन्दी की वजूहात

अब रह गई ये बात कि देवबन्दी फ़िरक़े के ख़िलाफ़ उलमाऐ अहले सुन्नत का रवय्या इतना सख़्त क्यों है तो इसकी बहुत सी वजूहात हैं जिन्हें ठन्डे दिल से पढ़ने और समझने की ज़रूरत है।

पहली वजह :- पहली वजह तो यह है कि जिन कुफ़्रियात व ज़लालत की वजह से देवबन्दी फ़िरक़े के साथ हमारा बुनियादी इख़्तिलाफ़ है उनका ताल्लुक़ अक़ाइद से है और वह अक़ाइद या तो उनके दिलों में हैं या उनकी किताबों में छुपे हुऐ हैं। अब जहां तक अमल का ताल्लुक़ है तो वह भी अपने आपको हनफ़ी कहते हैं। ज़ाहिर में हमारी ही तरह वह भी नमाज़ पढ़ते हैं। बिल्कुल हमारी ही तरह वह भी अज़ान देते हैं, बिल्कुल हमारी ही तरह वह भी तरावीह पढ़ते हैं, बिल्कुल हमारी ही तरह वह भी ईदैन की नमाज़ पढ़ते हैं। ज़ाहिरी सतह पर उनके ज़ाहिर में कोई ऐसी वाज़ेह अलामत मौजूद नही जिसके ज़रिये सादा लोह मुसलमानों को उनकी शनाख़्त हो सके। इसलिए उनके मुताल्लिक़ अवाम का ग़लत फ़हमी में मुब्तिला होना बिल्कुल यक़ीनी अम्र है। इसी बुनियाद पर ये ज़रूरत दाओ होती है कि अक़ाइद की सतह से अवाम में उनका इतना वाज़ेह तआरूफ़ कराया जाए कि उन्हें पहचानने में कोई दुश्वारी पैदा न हो।

लेकिन जहां तक शियाओं का ताल्लुक़ है तो जहां उन्होंने अज़ान दी या नमाज़ की नियत बांधी तो फ़ौरन पता चल गया कि ये और हैं और हम और हैं। यही हाल ग़ैर मुक़ल्लिदीन का भी है। उनकी फ़र्ज़ नमाज़ें, उनके वितर और उनकी तरावीह और उनकी ईदैन की नमाज़ें चीख़ चीख़ कर अवाम को तम्बीह कर देती है कि ये दूसरे मज़हब के लोग हैं। इस लिए अवाम को उन से ख़बरदार करने की इतनी सख़्त ज़रूरत नहीं है जितनी सख़्त ज़रूरत अवाम को देवबन्दी

फ़िरके से बचाने की है।

देवबन्दी हज़रात सुन्नी अवाम को किस तरह बद-अक़ीदा बनाते हैं

ये घुस पेटिये है जो हमारी सफ़ों में घुसकर हमारा बन कर हमारे अवाम को मुख़्तलिफ़ तरकीबों से क़रीब करते हैं और जब वह समझ लेते हैं कि हमारा तीर निशाने पर बेठ गया है तो वह मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से अपनी जमाअत के अकाबिर का अक़ीदतमन्द बनाते हैं और इसके बाद उन्हें इतना बदल देते हैं कि वह अहले सुन्नत के उन सारे अक़ाइद व रिवायात को जिन्हें वह ईमान की तरह अज़ीज़ रखते थे अब शिर्क व बिदअत समझने लगते है और कुछ दिनों के बाद उनके दिलों पर बद-बख़्तियों की ऐसी मोहर लग जाती है कि न वह कुरआन की कोई बात सुनते हैं और न हदीस की। वाज़ेह रहे कि ये सारी बातें मैं मफ़रूज़ के तौर पर नही लिख रहा हूं बल्कि हमारे दिन रात के मुशाहिदात हैं। इन हालात में अहले सुन्नत के सादा लोह अवाम को अम्बिया व औलिया की जनाब में बद-अक़ीदा होने से बचाने के लिए हमारे पास सिवा इसके और क्या रास्ता है कि हम अपने अवाम को देवबन्दियों के अक़ाइद और उनके मकर व फ़रेब के हथकन्डों से पूरी तरह बा-ख़बर रखें।

दूसरी वजह :- देवबन्दी मज़हब का मुताला करने के बाद ये हक़ीक़त पूरी तरह खुल जाती है कि कुरआन हकीम में मुनाफ़िक़ीने मदीना की जो बुराइयां बयान की गई हैं उन सारी बुराइयों के ये हक़ीक़ी वारिस हैं। मिसाल के तौर पर मुनाफ़िक़ीन के पास दो ज़बानें थीं। एक ज़बान तो वह थी जो सिर्फ़ उनके अपने लोगों पर खुलती थी और दूसरी ज़बान वह थी जिसे हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जांनिसारों के सामने खोलते थे। कुरआन ने उनकी इस ख़सलत को इन अलफ़ाज़ में बयान किया है :-

"व इज़ा लक़ुल-लज़ीना आ-मनू क़ालू आ-मन्ना व
इज़ा ख़लौ-इला श्यातीनिहिम क़ालू इन्ना म-अ-कुम

इन्नमा नह्नु मुस्तह्-ज़ि-ऊना0"

तर्जुमा :- और जब वह नबी के जां निसारों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम भी तुम्हारी तरह जां निसार हैं, और जब तन्हाई में अपने श्यातीन के साथ होते हैं तो कहते हैं कि हम तो हक़ीक़त में तुम्हारे साथ हैं। हम तो सहाबा के साथ मज़ाक़ कर रहे थे।

ठीक यही हाल देवबन्दी फ़िरक़े का भी है। उनके पास भी दो ज़बानें हैं। एक ज़बान तो वह अम्बिया औलिया के वफ़ा है जो अम्बिया व औलिया के वफ़ादारों और अक़ीदतमन्दों के सामने खुलती है और दूसरी ज़बान वह है जिस ज़बान में वह अपने गिरोह के लोगों से बातें करते हैं।

अक़ीदा व अमल के तज़ाद का एक दिलचस्प क़िस्सा

इसकी ज़िन्दा मिसाल देखनी हो तो आप दिल्ली तशरीफ़ लाईये। यहां जमील इलयासी नाम के एक मशहूर शख़्स हैं जो अपनी पैदाइशी सरिश्त व ख़मीर के एतबार से कट्टर देवबन्दी व तब्लीग़ी हैं। उनके नाम के साथ "इलयासी" का पैवन्द ही उनके अन्दर का सारा हाल बता देता है। एक तरफ़ वह दिल्ली में देवबन्दियत व तब्लीग़ियत के इतने सरगर्म मुबल्लिग़ हैं कि शायद ही दिल्ली में कोई मस्जिद बची हो जिसे दिल्ली वक़्फ़ बोर्ड और वक़्फ़ कौन्सिल के मेम्बर होने की हैसियत से उन्होंने तब्लीग़ी जमाअत की छावनी में तब्दील न कर दिया हो।

लेकिन अब उनकी तस्वीर का दूसरा रूख़ मुलाहिज़ा फ़रमाईये और सर पीटिये कि दिल्ली के बाईस ख़्वाजगान की शायद ही कोई ऐसी दर्गाह हो जहां उर्स के मौक़े पर वह पेश पेश न रहते हों। श्री राजीव गांधी जब पहली बार प्रधानमन्त्री हुए तो उनकी चादर लेकर यही हज़रत अजमेर शरीफ़ गए और उनकी तरफ़ से ख़्वाजा के मज़ार शरीफ़ पर चढ़ाया और इससे भी ज़्यादा दिलचस्प क़िस्सा ये है कि जिस ज़माने में श्रीमति इन्द्रा गांधी प्रधानमन्त्री की ——— कुर्सी से उतार दी गई थी और अपनी नाकामी के कर्ब में ज़िन्दगी गुज़ार रही

थी तो खुश आइन्द मुस्तकबिल की निशान दही करने वाले ज्योतिषियों की तरह ये हज़रत भी एक दिन वहां पहुंच गए और इन्द्रि गांधी से कहा कि दुनिया में सिर्फ़ एक ही ज़ात है जो आप का गया हुआ तख़्त व ताज वापिस दिला सकती है और वह है गौसे आज़म की ज़ात जिनका मज़ार मुबारक बग़दाद शरीफ़ में है।

इन्द्रि गांधी को और क्या चाहिये था फ़ौरन बग़दार शरीफ़ के सफ़र का इन्तज़ाम करा दिया और ये बग़दाद शरीफ़ के लिए रवाना हो गए। वहां मज़ार शरीफ़ पर पन्द्रह दिन तक चिल्ला कश रहे और वापिस आकर इन्द्रि गांधी को खुशख़बरी दी कि वहां मुझे मज़ार शरीफ़ से बशारत हुई है कि नो महीने के बाद आपके दिन पलट आएंगे। इन्साफ़ कीजिए! अपने अक़ीदे के साथ इतनी ज़बरदस्त जंग सिवाय देवबन्दी फ़रज़न्दों के और कौन लड़ सकता है। देवबन्दी ज़बान के मुहावरे में क़ब्रों की परस्तिश भी करते रहे और मुश्रिक बनाने वालों को अपना इमाम भी मानते रहे। अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि ऐसे लोगों से बचना कितना मुश्किल है जिनके कई चेहरे हैं। देवबन्द सहारनपुर में कुछ हैं और बग़दाद व अजमेर चले गए तो कुछ और बन गए !

देवबन्दी मज़हब का एक और जनाज़ा

जिन हज़रात ने "तक़वियतुल ईमान" और "बहिश्ती ज़ेवर" का मुताला किया है वह इस हक़ीक़त से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं कि उलमाए देवबन्द के नज़दीक क़ब्रों से मदद मांगना शिर्क है, लेकिन अपने घर के बुज़ुर्गों की क़ब्रों के बारे में वह क्या अक़ीदा रखते हैं। इसे सहारनपुर के शैखुल हदीस मौलाना ज़करिय्या साहिब की किताब "तारीख़ मशायख़ चिश्त" मुलाहिज़ा फ़रमाइये। अपनी इस किताब में वह हाजी इमदादुल्लाह साहिब मुहाजिर मक्की के पीर व मुर्शिद मियां जी नूर मुहम्मद झनझानवी के सफ़रे आख़िरत का ज़िक्र करते हुए हाजी साहिब का ये बयान नक़्ल करते हैं कि अपने मरज़ुल मौत में उनके पीर व मुर्शिद ने इर्शाद फ़रमाया कि :-

"मेरा इरादा था कि तुम से मुजाहिदा व मुशक़्क़त लूंगा लेकिन

मशिय्यत बारी से कोई चारा नहीं। पयामे सफ़रे अख़िरत आ गया है। जब हज़रत ने ये कलमात फ़रमाए तो मैं पालकी की पट्टी पकड़कर रोने लगा। हज़रत ने तसल्ली दी और फ़रमाया कि फ़क़ीर मरता नहीं बल्कि एक मकान से दूसरे मकान में इन्तिक़ाल करता है। फ़क़ीर की क़ब्र से वही फ़ायदा होगा जो ज़ाहिरी ज़िन्दगी में होता था।" (पेज-204)

मियां जो नूर मुहम्मद की क़ब्र से मुताल्लिक़ एक इबारत उनकी सवानेह हयात से भी मुलाहिज़ा फ़रमाइये जो इदारा तालीफ़ाते अशरफ़िया थाना भून से शायअ हुई है और जिस पर क़ारी तय्यब साहिब मोहतमिम दारूल उलूम देवबन्द की तक़रीज़ है। मुसन्निफ़ किताब में लिखते हैं कि :-

"हज़रत मियाँजियो रहमतुल्लाह अलैहि की वफ़ात के बाद भी आपकी रूह पुर फ़ुतूह से वही फ़ैज़ान व इरफ़ान का चश्मा जारी है और आप के इर्शाद के मुताबिक़ आपके मज़ार मुक़द्दस से भी वही फ़ुयूज़ व बरकात हासिल होते हैं जो आपकी ज़ात क़ुदसी सिफ़ात से होते थे।" (सवानेह हयात मियाँजियो पेज-78)

अब इस दावे के सबूत में उनके इन्तक़ाल के बाद उनकी क़ब्र से भी वही फ़ायदा है जो उनकी ज़ाहिरी ज़िन्दगी में होता था। उनकी सवानेह हयात के मुसन्निफ़ ने ये वाक़िआ नक़्ल किया है कि :-

"एक बार हाजी इमदादुल्लाह साहिब ने फ़रमाया कि मेरे हज़रत का एक जोलाहा मुरीद था। बाद इन्तक़ाल हज़रत के मज़ार पर हाज़िर हुआ और फ़ातिहा के बाद उस ने अर्ज़ की कि हज़रत मैं बहुत परेशान हूं और तंगीये मआश में मुब्तिला हूं, मेरी कुछ दस्तगीरी फ़रमाइये। हुक्म हुआ कि तुमको हमारे मज़ार से दो आने रोज़ मिला करेंगे। एक मर्तबा मैं ज़ियारत को गया वह शख़्स भी हाज़िर था, उसने कुल कैफ़ियत बयान करके कहा कि मुझे रोज़ वज़ीफ़ए मुक़र्ररा क़ब्र की पाइन्ती से मिला करता है।" (सवानेह मियाँजियो पेज-79)

इन्साफ़ कीजिए ! देवबन्दी फ़िरक़े की मशहूर किताबों

"तक़वियतुल ईमान, बहिश्ती ज़ेवर और फ़तावा रशीदिया" में निहायत सराहत के साथ बयान किया गया है कि किसी क़ब्र पर हाज़िर होकर मदद मांगना और मुसीबतों में उन से दस्तगीरी की दरख़्वास्त करना सरीह शिर्क है लेकिन आप देख रहे हैं कि इस वाक़िये में शिर्क का वह सारा फ़ुतवा ईमान के लिबास में तब्दील हो गया।

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि जिस फ़िरक़े के चेहरे पर निफ़ाक़ के इतने दबीज़ पर्दे हों कि अपने ही मज़हब के अक़ीदे छुपा लें उसकी पेहचान कितनी मुश्किल है।

देवबन्दी फ़िरक़े के इसी दो रंगी मज़हब के मुफ़ासिद से बचाने के लिए उलमाऐ अहले सुन्नत को ज़रूरत पेश आई कि अवाम को उनके चेहरे के खद व खाल से बार बार वाक़िफ़ कराऐं ताकि वह उनके फ़रेब में मुब्तिला होने से मेहफ़ूज़ रहें।

बिदअ़त की बहस

देवबन्दी फ़िरक़े के यहां बिदअत का लफ़्ज़ भी बहुत कसीरुल इस्तेमाल है। बार बार अहले सुन्नत को बिदअती कहना उनकी आम बोल चाल है। यहां तक कि उन्होंने अहले सुन्नत का नाम ही बिदअती रख दिया है। जैसा कि अपनी इसी किताब में तारीख़ मशायख़ चिश्त में मौलाना ज़करिय्या ने हाजी इमदादुल्लाह साहिब का ये बयान नक़्ल किया है कि :-

"मै किसी को बेअत करने से इसलिए इन्कार नही करता कि वह शख़्स किसी बिदअती के पन्जे में न गिरफ़्तार हो जाए। फिर अल्लाह तआला मुझसे मुआख़िज़ा फ़रमावेंगे कि वह तुम्हारे पास गया था तुम ने क्यों रद कर दिया जिसकी वजह से वह ऐसी जगह फंसा।"

(तारीख़ मशायख़ चिश्त पेज-266)

इस इबारत का मतलब सिवा इसके और क्या निकलता है कि हाजी साहिब चूंकि देवबन्दियों के पीर व मुर्शिद हैं इसलिए तन्हा वही सुन्नत के तरीक़े पर हैं बाक़ी दूसरे मशायख़े तरीक़त तो सर ता सर बिदअती हैं।

अब इसी मकाम पर तस्वीर का दूसरा रूख आपके सामने पेश करने की ज़रूरत महसूस करता हूं। इसी किताब में मौलाना ज़करिय्या साहिब ने अपने पीर व मुर्शिद मियां जी नूर मुहम्मद झनझानवी के मज़ार पर पत्थर का एक कत्बा नसब किया है, जिसपर ये अशआर कन्दा हैं :-

शहर झनझाना है इक जाए हुदा — मस्कन व मावा है जिस जा आपका।
मौला पाक आपका है और मज़ार — इस जगह तू जान ले ऐ होशियार।
इस जगह है मर्क़द पाक जनाब — सर झुकाते हैं सब शेख़ व शाब।
जिसको हो शौक़ दीदार खुदा — उनके मर्क़द की ज़ियारत को वो जा।
देखते ही उसके मुझको है यकीं — उसको हो दीदार रब्बुल आलमीं।

ग़ौर फ़रमाइये ! मरक़द पाक की ज़ियारत करने के लिए जाना और मरक़द पाक के दीदार से रब्बुल आलमीन का दीदार करना, क्या सारी बातें देवबन्दी मज़हब में जायज़ हैं ? मौलाना ज़करिय्या से लेकर देवबन्दी फ़िरक़े के सारे असाग़िर व अकाबिर को मैं चैलेन्ज करता हूं कि तक़वियतुल ईमान, बहिश्ती ज़ेवर और फ़तावा रशीदिया में बयान करदा अक़ाइद की रौशनी में वह साबित करें कि ये अशआर देवबन्दी मज़हब के मुताबिक़ हैं लेकिन फिर बात वहीं पलट कर आती है कि ये अमल चूंकि अपने घर के बुज़ुर्ग का है इस लिए आंख बन्द कर के इसे जायज़ मानना ही पड़ेगा।

अपने बुज़ुर्गों की ख़ातिर उसूलों का ख़ून करना देवबन्दी फ़िरक़े का यही दो रंगी मज़हब है, जिसका पर्दा चाक करने के लिए उलमाए अहले सुन्नत को किताबें भी लिखना पड़ीं, मुनाज़िरा भी करना पड़ा और इसी कलमाए हक़ को अपनी ज़िन्दगी का मिशन भी बनाना पड़ा।

17 मुहर्रमुल हराम 1413 हि०
19 जुलाई 1992 ई०
(अर्शदुल क़ादरी ग़ुफ़िर-लहु)
बानी व मोहतमिम जामिया हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया, नई दिल्ली